शंकर गुहा नियोगी के साथ बिताए कुछ साल

शंकर गुहा नियोगी के साथ बीते कुल साल का दस्तावेज

(एक सहयोद्धा की रपट)

पुण्यव्रत गुण

अनुवाद : पलाश विश्वास

मीडिया स्टडीज ग्रुप

दिल्ली-110085

MSG BOOKS
प्रथम संस्करण : 2018
© मीडिया स्टडीज ग्रुप
www.mediastudiesgroup.org.in

ISBN : ~~978-81-926852-7-4~~

प्रकाशक
मीडिया स्टडीज ग्रुप
ए-4/5, सेक्टर-18, रोहिणी,
दिल्ली-110085

मुद्रक
डॉल्फिन प्रिंटो ग्राफिक्स,
नई दिल्ली-110055

पुण्यव्रत गुण

अनुवाद : पलाश विश्वास

₹ ??????????

के साथ बिताए कुछ साल :: 2

अनुक्रम

यह संकलन क्यों?

मैं 28 सितंबर, 1991 को दल्ली राजहरा से शहीद अस्पताल के एंबुलेंस में भिलाई जा रहा था। नियोगी जी की पत्नी आशाजी साथ थीं। हमें कुछ ही देर पहले खबर मिली थी कि देर रात हत्यारे की गोली से नियोगीजी शहीद हो गये। आशा को हालांकि यह खबर मालूम न थी। वे जान रही थीं कि नियोगीजी अस्वस्थ हैं। चुपचाप मैं सोच रहा था कि 1989 में साहित्य परिषद का गठन करके मैंने नियोगीजी की रचनाओं का जो प्रकाशन शुरू किया था, उसके तहत उनके अनेक लेखों का प्रकाशन अभी बाकी है। विभिन्न आंदोलनों का इतिहास कायदे से लिपिबद्ध नहीं किया जा सका। लिखना अभी बाकी है...

अनुष्टुप की ओर से 'संघर्ष ओ निर्माण', कवि समीर राय संपादित अभिमुख पत्रिका का विशेषांक, राजकमल प्रकाशन द्वारा 'संघर्ष और निर्माण', इत्यादि के जरिये व्यक्ति शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ आंदोलन के दस्तावेज तैयार करने की कोशिशें हमने की हैं। किंतु एक जिंदा आंदोलन को लेकर हम काम कर रहे थे और हम भी उसी आंदोलन में शामिल थे। संगठन में विचारधारा को लेकर बहस, संगठन का बिखराव, आंदोलन के कमजोर होते जाने, मेरा छत्तीसगढ़ छोड़कर बंगाल वापस आना- यह सबकुछ जैसे हो रहा था, वैसे ही इस आंदोलन के सबक के मुताबिक अन्यत्र काम शुरू करने का प्रयास भी जारी रहा है। इन 26 सालों में छत्तीसगढ़ आंदोलन पर मैंने खूब लिखा है। शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के आंदोलन को लेकर इधर जो दिलचस्पी दिखने लगी है, उसके मद्देनजर यह जरूरत पूरी करने के लिहाज से चुनिंदा लेखों का यह संकलन है।

'शंकर गुहानियोगी के साथ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में' इस संकलन का सबसे लंबा आलेख है। सबसे आखिर में लिखा यह आलेख, परिचय पत्रिका के 2016 पुस्तक मेला अंक में प्रकाशित हुआ। हालांकि बांग्ला में प्रकाशन से पहले इस आलेख का अंग्रेजी अनुवाद द फ्रंटियर पत्रिका के 2015 के शारदीय अंक में प्रकाशित हो गया था। तीन साल पहले छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में मेरे एक सहकर्मी ने अपने संस्मरणों

की एक किताब प्रकाशित कर दी। उसमें उन्होंने नियोगी के खिलाफ कुछ निराधार आरोप लगाये हैं। तमाम मित्र चाहते थे कि मैं उन आरोपों का खंडन करूं। मैंने वैसा कुछ नहीं किया है। यह मेरे अपने संस्मरण हैं, नियोगी और आंदोलन को मैंने जैसे देखा है। अब पाठक पाठिका अवश्य ही दोनों संस्मरण पढ़कर खुद सच का पता लगा लेंगे, मुझे ऐसी ही उम्मीद है।

'दल्ली-राजहरा का जन स्वास्थ्य आंदोलन ओ शहीद अस्पताल' पहले धारावाहिक रूप में 1989 में उत्स मानुष पत्रिका में छपा। मैं प्रधानतः स्वास्थ्य आंदोलन का कार्यकर्ता रहा हूं और आंदोलन की जरूरत के मुताबिक दल्ली-राजहरा का स्वास्थ्य आंदोलन के उत्थान पतन का ब्यौरा दर्ज करने की गरज से इस आलेख का बार बार परिमार्जन संशोधन करना पड़ा है।

'दल्ली राजहरा का मशीनीकरण विरोधी आंदोलन' पहली बार 1989 में आंदोलन के दौरान 'मतप्रकाश' पत्रिका में प्रकाशित हुआ। इसका वर्द्धित रूप संघर्ष और निर्माण संकलन में शामिल हुआ। मौजूदा आलेख का यह रूप वेब मैगेजीन गुरुचंडाली में मेरे ब्लॉग के लिए लिखा गया है।

'छत्तीसगढ़ का नारी आंदोलन' पर पहले मैंने 'अहल्या' पत्रिका के लिए लिखा था। यह आलेख 'संघर्ष ओ निर्माण' में 'अहल्या पत्रिका' की संपादक के नाम पर फिर छपा। मौजूदा आलेख मेरे ब्लॉग के लिए लिखा गया है।

'शराबबंदी आंदोलनः दल्ली राजहरा की अभिज्ञता' ब्लॉग के लिए ही लिखा है।

'श्रमिक शिल्पी फागुराम यादव' को लेकर पहला आलेख डुलुंग पत्रिका के लिए था, जिसे फागुराम की मृत्यु के बाद परिमार्जित किया गया।

भिलाई श्रमिक आंदोलन के दौरान 1992 के 1 जुलाई को आंदोलनकारी श्रमिकों पर गोलियां चली दी गईं। भिलाई श्रमिक आंदोलन पर मेरा आलेख 1995 में अनीक के जुलाई अंक में प्रकाशित हुआ।

सामाजिक परिवर्तन की विचारधारा में कामरेड नियोगी का अवदान 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति है। इस पर 'एखोन विसंवाद' पत्रिका के सितंबर अक्टूबर 1995 अंक में लिखने की कोशिश की थी।

किन कारणों से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संगठन में बिखराव शुरू हुआ, क्यों आंदोलन भटक गया, इस पर 'एखोन विसंवाद' पत्रिका के दोनों संपादकों ने लिखने को कहा था।

'सिर्फ राज्य नहीं, छत्तीसगढ़ ने मांगी थी मुकम्मल आजादी' एखोन विसंवाद पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। इस आलेख में राष्ट्रीयता की आजादी के मुद्दे पर नियोगीजी की अभिनव विचारधारा का परिचय देने का मैंने प्रयास किया था।

इन 26 सालों में छत्तीसगढ़ आंदोलन को जानने समझने के लिए कई तरह की

पहल हुई। 2015 में पुस्तक मेले के मौके पर जिसका संपादक मैं भी रहा। अनस्टुप ने नये रूप में 'संघर्ष ओ निर्माण' प्रकाशित किया।

www.sanhati.com के शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा दस्तावेज में विभिन्न महत्वपूर्ण दस्तावेजों को संकलित किया जा रहा है। ऐसे सारे प्रयासों के साथ 'सेतु' प्रकाशनी के एक संकलन से कामरेड शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के कामकाज का एक ब्यौरा नियोगी जी के 25वें शहादत दिवस को प्रकाशित हुआ। उस बंगाल किताब का हिंदी अनुवाद साथी पलाश विश्वास ने किया। मीडिया स्टडीज ग्रुप उस हिंदी संकलन को प्रकाशित कर रहा है। इस हिंदी संकलन से देश के हिंदी भाषी लोगों को छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के आंदोलनों को समझने में मदद मिलेगी, ऐसी उम्मीद है।

तारीखः 28 सितंबर, 2017 पुण्यव्रत गुण
स्थानः कोलकाता

शंकर गुहानियोगी के साथ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में

कुछ मस्ती में तो कुछ अभिमान के तहत मैं कहा करता था- मैं नियोगी की बी टीम का आदमी हूं। ए-टीम में विनायक दा (सेन), आशीष दा (कुमार कुंडु) थे। शैबाल दा (जाना), चंचलादी (समाजदार) और मैं मिलकर अस्पताल का कामकाज संभालते थे। वे लोग संगठन का काम करते थे। विनायक दा पूरी तरह और आशीष दा आंशिक रुप में। 1986 के दिसंबर में मेरे शहीद अस्पताल में जाने के कुछ ही दिनों बाद आशीष दा ने पारिवारिक जिम्मेदारियां उठाने के लिए विदा ले ली। कुछ ही महीने बाद चंचला दी भी चल दीं। 1987 के आखिर में विनायक दा और इलीना दी ने दल्ली राजहरा छोड़ दिया। अस्पताल में डॉक्टर कहने को मैं और शैबाल दा रह गये। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में बुद्धिजीवी हम दोनों के अलावा अनूप सिंह थे। अनूप 1987 में मोर्चा में होल टाइमर हैसियत से शामिल हुए।

लोग कम थे, इसलिए अस्पताल और स्वास्थ्य आंदोलन के अलावा संगठन के लिए वक्त देने की जरूरत आन पड़ी इसी वक्त। जब लोग ज्यादा थे, तब इसकी जरूरत नहीं थी।

मैं जब मेडिकल कॉलेज में प्रथम वर्ष का छात्र था, तब 1979 में मुझे पहली बार शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ आंदोलन के बारे में मालूम हुआ। जहां तक याद है, कर्टेन नामक पत्रिका में यह सब पढ़ने को मिला था। 1982 में तृतीय वर्ष में पढ़ते हुए एक सीनियर दादा से छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सफाई आंदोलन, शहीद डिस्पेंसरी, शहीद अस्पताल बनाने के ख्वाब के बारे में मालूम हुआ..। वे डॉ. पवित्र गुह हैं, उन्होंने 1981 से कुछ महीनों के लिए सीएमएसएस के साथ काम किया था। (नियोगी की शहादत के बाद नौकरी छोड़कर वे फिर 1992 में शहीद अस्पताल में चले गये। 1994 तक वे उस अस्पताल में थे। अब भी वे दल्ली राजहरा में बने हुए हैं।) उनसे वे बातें सुनने के बाद दल्ली राजहरा मेरे सपनों का देश बन गया। तब सीएमएसएस के साथ काम करना मेरा सपना था।

उस सपनों के देश के अन्यतम रूपकार के साथ मेरी पहली मुलाकात जुलाई,

1985 के पहले हफ्ते हो गयी। 3 जून को भोपाल के गैस पीड़ितों ने यूनियन कार्बाइड परिसर में एक जन अस्पताल की नींव रखी। तभी कोलकाता और मुंबई से वहां गये जूनियर डॉक्टरों की मदद से जन स्वास्थ्य केंद्र का काम चालू हुआ, जहां गैस पीड़ितों को जहरीली गैस के प्रतिषेधक सोडियम थायोसल्फेट इंजेक्शन लगाये जाते थे और उनके लक्षण, इत्यादि यानी जहरीली गैस की मौजूदगी में सुधार का लेखा जोखा दर्ज किया जाता था, ताकि यूनियन कारबाइड के अपराध के सबूत मजबूत हों। इसी वजह से राष्ट्र का दमन शुरू हो गया और 24 जून की रात डॉक्टरों, स्वास्थ्य कर्मियों और संगठकों को गिरफ्तार कर लिया गया। बंद हो गये केंद्र को चालू करने के लिए कोलकाता से जूनियर मित्र डॉ. ज्योतिर्मय समाजदार के साथ मैं गया था। उस दिन जमानत पर छूटने वाले थे तमाम कैदी। एक टीले पर भोपाल जेल के पीछे सूर्यास्त हो रहा था। अधमैले पाजामा कुर्ता पहने एक दीर्घकाय पुरुष के उछाले नारों के साथ वहां इकट्ठी जनता नारे लगा रही थी- 'जेल का ताला टूटेगा, हमारा साथी छूटेगा'- छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नेता शंकर गुहा नियोगी। उनसे परिचय हुआ, उन्हें मैंने आंदोलन में काम करने के अपने सपने के बारे में बताया। हिंदी उच्चारण के साथ बांग्ला में वे बोले-राजनांदगांव में एक और अस्पताल खोलने के बारे में सोच रहा हूं, चले आइये...'

मैं राजहरा एक सहपाठी के साथ आंदोलन का चाक्षुष परिचय पाने के मकसद से अक्टूबर, 1986 में पहुंच गया। दुर्ग से जाने वाली बस ने हमें नये बस अड्डे पर उतार दिया। शहीद अस्पताल थोड़ी दूरी पर है, पर नहीं मालूम था। हम पैदल चल रहे थे। तमाम ट्रक लाल हरे झंडे लगाये चल रहे थे। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ लिखी एक जीप को हाथ दिखाया। जीप ने हमें अस्पताल छोड़ दिया। अस्पताल एक टीले पर था। सामने ऊंचे फ्लैग स्टैंड पर लाल हरे ध्वज लहरा रहे थे। थोड़ी दूरी पर विशाल यूनियन आफिस, आंदोलन में व्यस्त नियोगी से करीब आधे घंटे तक बात करने का तब मौका मिला था। यूनियन दफ्तर में बैठकर वे उन सपनों के बारे में बता रहे थे, जो छत्तीसगढ़ में सच होने लगे थे। यूनियन आफिस से निकलते निकलते मैंने तय कर लिया था- दल्ली राजहरा ही मेरा भावी कार्यक्षेत्र होगा। मासिक भत्ता कितना मिलेगा, पूछने में संकोच था (जो हमने तीन महीने बाद तब जाना, जब श्रमिकों की लंबी हड़ताल के बाद तीन महीने का भत्ता एक मुश्त मिला)। बिजली और पक्का शौचालय है या नहीं, सिर्फ इन दो सवालों का जवाब मुझे जानना था। जनमजात कोलकाता महानगर में पला बढ़ा हूं, इन दोनों के बिना मेरा गुजारा हो नहीं सकता था।

1986 के दिसंबर में कोलकाता छोड़कर राजहरा चला आया। मैं कॉलेज में परिवर्तनकामी छात्र राजनीति से जुड़ा था। सपना देखता था श्रमिकों किसानों के साथ एकात्म हो जाने का, किंतु सामाजिक बदलाव की राजनीति के बारे में विचारधारा के

स्तर पर पढ़ाई लगभग शून्य थी। हमेशा व्यस्त नियोगी के साथ जब भी मुलाकात होती, उनकी बातें सुनता रहता था, समझने की कोशिशें करता रहता था। मेरे राजनीतिक जीवन का प्रधान शिक्षक नियोगी जी ही रहे हैं।

1987 में पहली या फिर दूसरी जनवरी तारीख रही होगी, दल्ली माइंस के मजदूर हड़ताल पर थे। इस मौके का फायदा उठाकर भिलाई स्टील प्लांट मैनेजमेंट ने मशीनीकरण न करने का समझौता तोड़कर डंपर चलाने की कोशिश की। डंपर रोकने की कोशिश में सीआईएसएफ के लाठीचार्ज में 21 श्रमिक और श्रमिक नेता जख्मी हो गये। किसी का सर फट गया तो किसी के हाथ टूट गये। उन्हें शहीद अस्पताल लाया गया, दर्द से वे तड़प रहे थे। दर्द निरोधक इंजेक्शन से कोई ज्यादा फायदा नहीं हो रहा था। खबर पाकर अपने घर से दौड़े चले आये नियोगी, गुस्से में दांत चबाते हुए। सहानुभूति के साथ वे जख्मी साथियों के शरीर को सहलाने लगे, मैंने ताज्जुब होकर देखा कि दर्द निरोधक इंजेक्शन से जो काम नहीं हुआ, वह नियोगी के स्पर्श मात्र से हो गया। जख्मी तमाम साथी जैसे अपना दर्द भूलकर शांत हो गये। (मां की गोद के स्पर्श से जैसे बच्चे अपना पेट दर्द भूल जाते हैं, उसी तरह शायद)। इसके बाद वे तेज कदमों से अस्पताल से निकलकर अपनी जीप लेकर खदान की तरफ भागे। बाद में सुना, नियोगी ने गुस्से में सीआईएसएफ के कमांडर का कॉलर पकड़ लिया, जवानों ने गोली चलाने के लिए बंदूक का निशाना साध लिया, तभी किसी बड़े ओहदे वाले पुलिस अफसर ने आकर बीच बचाव किया वरना नियोगी पर उसी दिन गोली चल जाती। उसी दिन मुझे सहयोद्धाओं के प्रति उनका ममत्वबोध, उनकी असीम साहसिकता और श्रेणी घृणा की बातें समझ में आ गयीं। इसके अलावा पहली बार देखा कि किसी सही रहनुमा से लोग कितनी मुहब्बत करते हैं।

जब मैं छत्तीसगढ़ गया, तब मुझे हिंदी लगभग नहीं के बराबर आती थी। किसी बंगाली से मुलाकात हो जाये तो बांग्ला में बातचीत करके राहत की सांस लेता था। नियोगी जी से बांग्ला में बात करने की कोई सुविधा नहीं थी। वे हिंदी में ही बातचीत किया करते थे और कहते थे कि गलत हिंदी में ही बातें करें। किस तरह उन्होंने खुद हिंदी सीखी थी, वह कथा भी उनसे सुन ली मैंने। भूमिगत रहने के दौरान करीब दस साल तक सचेतन तौर पर उन्होंने किसी बांग्ला या अंग्रेजी शब्द का उच्चारण नहीं किया था। मुझसे उन्होंने कहा-'हिंदी में सोचना समझना शुरू कीजिये, हिंदी में सपना देखते रहिये, देखिये हिंदी कैसे आपके नियंत्रण में आ जाती है।' बहरहाल हिंदी में सपना तो नहीं देख सका, लेकिन उनकी सलाह पर अमल करके नतीजा जरूर निकला। हिंदी में बातचीत करना, हिंदी में लिखना, छत्तीसगढ़ छोड़ने के लगभग 23 साल बाद भी हिंदी में बातचीत अंग्रेजी के मुकाबले मेरे लिए ज्यादा सहज है।

नियोगी ने कोई आत्मकथा नहीं लिखी है, वक्त मिलने पर लिखते, ऐसा भी नहीं

लगता। किसी से वे अपने पूर्व जीवन के बारे में कुछ नहीं कहते थे, ऐसा कुछ जिससे कोई उनकी कोई Authorized Biography लिख मारे। किंतु अपने जीवन के नाना अध्याय के संस्मरण, 1969 से लेकर 1977 में आपातकाल के अंत तक की टुकड़ा टुकड़ा कथाएं मैंने उनसे अनेक बार सुनी हैं, दूसरों ने भी सुनी हैं।

नियोगी का ऐसा था जीवन

एक मध्यम वर्गीय परिवार में जन्म हुआ था शंकर का (शंकर उनका असल नाम नहीं है, असल नाम धीरेश है), पिता हेरंब कुमार और मां कल्याणी। असम के नौगांव जिले के यमुनामुख गांव में पिता के कर्मस्थल में उनकी प्राथमिक शिक्षा हुई। असम के सुंदर प्राकृतिक नैसर्ग ने उन्हें प्रकृतिप्रेमी बना दिया था। फिर आसनसोल के संकतोरिया कोयलाखान अंचल में ताउजी के यहां रहकर माध्यमिक की पढ़ाई पूरी की, जहां खदान मजदूरों की जिंदगी को बहुत नजदीक से देखने के बाद उन्हें अच्छी तरह मालूम हो गया कि क्यों धनी और धनी बनते हैं और क्यों गरीब और गरीब। जलपाईगुड़ी में आईएससी पढ़ते वक्त वे छात्र आंदोलन में शामिल हो गये। वे प्रतिबद्ध कार्यकर्ता हो गये छात्र फेडरेशन के। 1959 में बंगाल भर में शुरू खाद्य आंदोलन की लहरों ने उन्हें बहा दिया। दक्ष छात्र संगठक के बतौर उन्हें अविभाजित कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता मिल गयी। राजनीतिक सक्रियता की वजह से आईएससी में उनका नतीजा अच्छा नहीं रहा। इसके बावजूद पारिवारिक सिफारिश के दम पर उन्हें उत्तरी बंगाल के इंजीनियरिंग कॉलेज में सीट मिल गयी। इस अन्याय को वे हजम नहीं कर सके और इसके खिलाफ उन्होंने घर छोड़ दिया।

बात 1961 की है- तब भी भिलाई इस्पात कारखाना में नौकरी मिलना इतना मुश्किल भी नहीं था। नियोगी से सुना है कि कारखाना के रिक्रूटिंग अफसर दुर्ग स्टेशन पर मेज सजाकर बैठे होते थे कि ट्रेन से उतरने वालों में से काम की खोज में आये लोगों को कारखाना के कामकाज में जोत दिया जा सके। कारखाना में काम के लिए न्यूनतम उम्र अठारह साल से तब कुछ महीने कम उम्र थी धीरेश की, इसलिए उन्हें कुछ वक्त इंतजार करना पड़ा। इसके बाद प्रशिक्षण खत्म होने के बाद कोक ओवेन विभाग में उन्हें दक्ष श्रमिक की नौकरी मिल गयी। उच्च शिक्षा की आकांक्षा थी तो दुर्ग के विज्ञान कॉलेज में प्राइवेट छात्र बतौर वे बीएससी और एएमआईई पढ़ने लगे। उस कॉलेज में भी छात्र आंदोलन की बागडोर धीरेश के हवाले। उनके कुशल नेतृत्व की खबर मिलने पर दुर्ग नगर पालिका के सफाई कर्मचारी उनके पास चले आये। फिर उन्हीं के नेतृत्व में सफल हड़ताल के बाद उन्होंने अपनी मांगें पूरी करवा लीं। इस्पात कारखाना में मान्यता प्राप्त यूनियन आईएनटीयूसी की थी। इसके बाद दूसरी बड़ी यूनियन एआईटीयूसी। नियोगी एआईटीयूसी के साथ रहने के बावजूद

स्वतंत्र तौर पर श्रमिकों की विभिन्न समस्याओं के समाधान में जुट गये।

1964 में सीपीआई टूटकर दो फाड़ हो गयी। धीरेश सीपीआईएम के साथ हो गये। उस वक्त एक प्रवीण कम्युनिस्ट चिकित्सक डॉ.बीएस यदु से वे प्रथागत मार्क्सवाद लेनिनवाद का पाठ सीख रहे थे। 1967 के नक्सलबाड़ी जन विद्रोह ने मध्य प्रदेश में भी हलचल मचा दी। राज्य के लगभग सभी **सीपीआई** कार्यकर्ता नक्सलबाड़ी की राजनीति से प्रभावित हो गये। धीरेश ऑल इंडिया कोआर्डिनेशन कमिटी ऑफ कम्युनिस्ट रिव्योलुशनारिज के संपर्क में आ गये। 1969 में 22 अप्रैल को 'सीपीआई (एमएल)' के गठन के बाद वे उसके साथ भी कुछ अरसे तक रहे। किंतु तत्कालीन जन संगठन- जन आंदोलन के वर्जन की लाइन से अपने कामकाज का तालमेल बिठा न पाने की वजह से वे पार्टी से बहिष्कृत हो गये। (उल्लेखनीय है कि केंद्रीय समिति के जिन बुजुर्ग नेता की मौजूदगी में नियोगी को निष्काषित किया गया, बाद में उसी सवाल पर उन्होंने पार्टी लाइन का विरोध कर दिया।)

इस बीच कुछ और घटनायें हो गयीं। 1968 में भिलाई इस्पात कारखाने में कामयाब हड़ताल का नेतृत्व करके धीरेश की नौकरी चली गयी। दूसरी तरफ नक्सलवादी तमगा लगाकर पुलिस उन्हें खोज रही थी। इस दौरान भूमिगत रहकर वे एक हिंदी साप्ताहिक के माध्यम से श्रमिकों को संबोधित कर रहे थे। लेनिन की इस्क्रा की प्रेरणा से उन्होंने इस पत्रिका का नाम स्फुलिंग रखा। दूसरी तरफ, गांवों में पहुंचने की उनकी तैयारी चलती रही। इस वक्त वे समझ रहे थे कि श्रमिक वर्ग के साथ शोषित छत्तीसगढ़ी राष्ट्रीयता का मेल बंधन कराये बिना श्रमिक आंदोलन में जीत संभव नहीं है। छत्तीसगढ़ी राष्ट्रीयता की समस्या पर रचित उस वक्त की उनकी एक पुस्तिका महाराष्ट्र से छपकर आने के रास्ते पुलिस ने जब्त कर ली।

छत्तीसगढ़ को जानने के लिए, छत्तीसगढ़ी जनता को समझने के लिए, उनके साथ एकात्म होने के मकसद से 1968 से वे गांव दर गांव भूमिगत रहे। कभी बकरे बेचने वाला बनकर- गांवों से बकरियां खरीदकर बेचने के लिए दुर्ग भिलाई ले जाते और इसी की आड़ में वहां के साथियों से संपर्क बनाये रखते। कभी फिर फेरीवाला, कभी मछुआरा तो कभी पीडब्ल्यूडी का मजदूर। इसके साथ साथ लोगों को संगठित करने का काम होता रहा- दैहान बांध बनाने का आंदोलन, सिंचाई के पानी की मांग लेकर बालोद के किसानों का आंदोलन, मोंगरा बांध के खिलाफ आदिवासियों का आंदोलन...

1971 में उन्हें भिलाई इस्पात परियोजना के दानीटोला कोयार्जाइट खान में ठेका मजदूर हैसियत से काम मिला। कोक ओवेन का दक्ष श्रमिक होने के बावजूद वे हाफ पैंट पहनकर पत्थर तोड़ने का काम कर रहे थे। जिस नाम से वे मशहूर हैं, वह शंकर नाम उसी दौर का छद्म नाम है। यहीं सहश्रमिक सियाराम की बेटी आशा से परिचय और परिणय हुआ। उनकी बनायी खान मजदूरों की पहली यूनियन भी उसी

दानीटोला में बनी, हालांकि वह यूनियन एआईटीयूसी के बैनर में बनी। 1975 में आपातकाल के दौरान मिसा के तहत गिरफ्तारी से पहले तक दानीटोला मजदूर यूनियन का काम ही कर रहे थे नियोगी।

भिलाई इस्पात परियोजना की सबसे बड़ी लोहा पत्थर खदान दल्ली राजहरा में है। जब नियोगी रायपुर जेल में कैद थे, तभी दल्ली राजहरा के ठेका मजदूर स्वतःस्फूर्त आंदोलन में शामिल थे। आईएनटीयूसी और एआईटीयूसी के नेतृत्व ने भिलाई इस्पात प्रबंधन के साथ तब एक बोनस समझौता किया। इस समझौते के मुताबिक स्थाई श्रमिकों को 308 रुपये और ठेका मजदूरों को 70 रुपये बोनस देने का करार हो गया, जबकि ठेका मजदूर भी स्थाई मजदूरों की तरह एक ही तरह का काम करते थे। इस अन्यायपूर्ण समझौते के खिलाफ मजदूर दोनों यूनियनों से बाहर चले आये। आपातकाल का आखिरी दौर था वह। 3 मार्च, 1977 को इन तमाम मजदूरों ने काम बंद करके लाल मैदान में अनिश्चितकालीन धरना शुरू कर दिया। वे खोज रहे थे कि उनके हक हकूक की लड़ाई में उनका सेनापति कौन बनें और कौन उनका नेतृत्व करें। श्रमिकों के उग्र तेवर देखने के बाद सीआईटीयू, एचएमएस, बीएमएस- किसी भी यूनियन के नेता उनके पास भटकने की हिम्मत जुटा न सके। कुछ ही दिनों बाद आपातकाल खत्म होने पर शंकर जेल से रिहा हो गये। दल्ली राजहरा से दानीटोला की दूरी 22 किमी की है। एआईटीयूसी से निकले कुछ श्रमिक बाहैसियत ईमानदार लड़ाकू नेता नियोगी को जानते थे। इसलिए दल्ली राजहरा के मजदूरों का एक प्रतिनिधिमंडल नियोगी से दल्ली राजहरा के आंदोलन के नेतृत्व करने का अनुरोध लेकर दानीटोला पहुंच गये। उनके अनुरोध पर नियोगी दल्ली राजहरा गये। गठित हुआ ठेका मजदूरों का स्वतंत्र संगठन- छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ (सीएमएसएस)। नई यूनियन का झंडा लाल हरा बना। लाल श्रमिक वर्ग की शहादत का रंग तो हरा किसानों का।

संघर्षों की जीत

शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में खान मजदूरों की पहली लड़ाई आत्म सम्मान की थी। वे दलाल नेताओं के दस्तखत वाले समझौते को मानने को तैयार नहीं थे। आर्थिक नुकसान सहकर उन्होंने भिलाई इस्पात परियोजना प्रबंधन और ठेकेदारों से सत्तर रुपये के बजाय सिर्फ पचास रुपये बतौर बोनस ले लिया।

1977 के मई महीने में शुरु हुआ आइडल वेज (मालिक काम न दे सकें तो उन्हें वेतन देना चाहिए) और बरसात से पहले घरों की मरम्मत के वास्ते सौ रुपये की मांगों को लेकर आंदोलन। इस आंदोलन के दबाव में 31 मई को श्रम विभाग के अफसरों की मौजूदगी में भिलाई इस्पात परियोजना प्रबंधन और ठेकेदारों ने सीएमएसएस के साथ हुए एक समझौते में दोनों मांगें मान लीं। किंतु पहली जून को जब मजदूर घर

मरम्मत के रुपये लेने पहुंचे तो ठेकेदारों ने वह देने से साफ मना कर दिया। नतीजतन फिर मजदूरों की हड़ताल शुरू हो गयी।

अगले दिन यानी दो जून की रात दो जीपों में भरी पुलिस नियोगी को गिरफ्तार करने चली आयी। यूनियन की झोपड़ी से नियोगी को उठाकर एक जीप निकल गयी। दूसरी जीप निकलने से पहले मजदूरों की नींद टूट गयी। वहां रह गये पुलिसवालों को नियोगी की रिहाई की मांग लेकर उन्होंने घेर लिया। उस रात घेराव तोड़ने के लिए पुलिस ने गोलियां चलाकर अनुसुइया बाई और बालक सुदामा समेत सात लोगों की हत्या कर दी, लेकिन वे खुद घेरा बंदी तोड़कर निकल नहीं सके। आखिरकार 3 जून को दुर्ग से विशाल पुलिस वाहिनी ने आकर और चार मजदूरों की हत्या करके घिरे हुए पुलिसवालों को छुड़ा लिया। ये ग्यारह लोग लाल हरे संगठन के शहीदों का पहली टीम है।

पुलिसिया जुल्म लेकिन श्रमिक आंदोलन का दमन करने में नाकाम रहा। 18 दिनों की लंबी हड़ताल के बाद खदान मैनेजमेंट और ठेकेदारों ने फिर मजदूरों की मांगें मान लीं। नियोगी भी जेल से रिहा हो गये।

इस जीत के जोश में भिलाई इस्पात परियोजना की दूसरी खदानों दानी टोला, नंदिनी, हिररी में सीएमएसएस की शाखाएं खुल गयीं। इन सभी शाखाओं से फिर आंदोलन और जीत का सिलसिला बन गया...।

दल्ली राजहरा दुर्ग जिले में है, बगल का जिला बस्तर। बस्तर के बाइलाडिला लोहा खदान में पूरी तरह मशीनीकरण की तैयारी हो रही थी, जिसके नतीजतन मजदूरों की छंटनी हर हालत में तय थी। मशीनीकरण रोकने के लिए एआईटीयूसी के नेतृत्व में बाइलाडिला के संघर्षरत मजदूरों पर 5 अप्रैल, 1978 को जनता सरकार की पुलिस ने गोलियां चला दी। उन मजदूरों का मजबूत साथ दिया दल्ली राजहरा के मजदूरों ने और इसके साथ ही नियोगी ने उन्हें दल्ली राजहरा में भी मशीनीकरण के संकट का अहसास करा दिया। मजदूरों ने मशीनीकरण विरोधी आंदोलन शुरू करके प्रबंधन को यूनियन के अर्ध मशीनीकरण की पेशकश मानने को मजबूर कर दिया। जिससे मजदूरों की छंटनी नहीं होनी थी लेकिन उत्पादन का परिमाण और गुणवत्ता बढ़ जाये, ऐसा बंदोबस्त भी हो गया। उन लोगों ने मशीनीकरण 1994 तक रोक देने में कामयाबी भी हासिल कर ली। (1994 में नेतृत्व के एक हिस्से ने श्रमिकों के साथ विश्वासघात करके दल्ली खदान को पूर्ण मशीनीकरण के लिए मैनेजमेंट के हवाले कर दिया)।

यूनियन की एक के बाद एक आर्थिक जीत के साथ साथ दल्ली राजहरा के मजदूरों की दैनिक मजदूरी में भारी इजाफा तो हो गया लेकिन उनके रहन सहन के स्तर में कोई तरक्की नहीं थी। बल्कि आदिवासी मजदूरों ने शराब पर अपना खर्च

बढ़ा दिया। इसपर नियोगी ने सवाल खड़ा कर दिया- तो क्या शहीदों का खून शराब भट्टी के नाले में बह जायेगा? इसके बाद एक अभिनव शराबबंदी आंदोलन की वजह से करीब एक लाख लोग नशा मुक्त हो गये। हालांकि यह आंदोलन चलाने के लिए 1981 में शंकर गुहा नियोगी को एनएसए कानून के तहत जेल भी जाना पड़ा।

संघर्षों में समाज निर्माण के आयाम

नियोगी ने ट्रेड यूनियन आंदोलन में एक नया आयाम जोड़ दिया। अब तक वेतन वृद्धि, बोनस की मांग और चार्ज शीट का जवाब देने के अलावा किसी यूनियन के पास कोई और काम नहीं था। अर्थात श्रमिकों के कार्यक्षेत्र तक ही ट्रेड यूनियनें सीमाबद्ध थीं। नियोगी कहा करते थे कि यूनियन सिर्फ श्रमिक के आठ घंटे(काम के घंटे) के लिए नहीं, 24 घंटे के लिए होनी चाहिए। इसी अवधारणा के तहत दल्ली राजहरा में नयी यूनियन ने अनेक नये नये परीक्षण प्रयोग किये।

श्रमिकों की रिहाइश को बेहतर बनाने के लिए मोहल्ला कमिटियां बनीं। भिलाई इस्पात परियोजना संचालित स्कूलों में ठेका श्रमिकों के बच्चों की पढ़ाई का कोई बंदोबस्त नहीं था। उनकी शिक्षा के लिए यूनियन की अगुवाई में छह प्राइमरी स्कूल खोले गये तो अपढ़ श्रमिकों के लिए वयस्क शिक्षा का कार्यक्रम शुरू हो गया। शिक्षा के लिए आंदोलन के दबाव में सरकार और खदान मैनेजमेंट को शहर में अनेक प्राइमरी, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्कूल खोलने पड़े। स्वास्थ्य आंदोलन बतौर सफाई आंदोलन शुरू हो गया। 26 जनवरी, 1982 को शुरू हो गयी शहीद डिस्पेंसरी तो 1977 के शहीदों की याद में 1983 के शहीद दिवस पर बन गया शहीद अस्पताल। श्रमिकों के लिए छुट्टी और मनोरंजन और स्वस्थ संस्कृति के लिए नया अंजोर (नई रोशनी) की शुरुआत भी हो गयी। खेल, व्यायाम, कसरत आदि के लिए शहीद सुदामा फुटबाल क्लब और रेड ग्रीन ऐथलेटिक क्लब बन गये। नारी मुक्ति आंदोलन के लिए महिला मुक्ति मोर्चा बन गया। छत्तीसगढ़ को शोषणमुक्त करने और छत्तीसगढ़ में मजदूर किसान राज बहाल करने के मकसद से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बना। सरकार की जन विरोधी वननीति के विरोध में यूनियन दफ्तर के पिछवाड़े मॉडल वन सृजन का काम भी चालू हो गया।

1978 में गठित छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सत्रह विभाग

1. ट्रेड यूनियन विभाग
2. बकाया और फाल बैक वेतन को लेकर काम करने वाला विभाग
3. कृषक विभाग, जो 1979 में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बन गया
4. शिक्षा विभाग

5. संचय विभाग
6. स्वास्थ्य विभाग
7. क्रीड़ा विभाग
8. नशाबंदी विभाग
9. सांस्कृतिक विभाग
10. श्रमिक बस्ती विकास विभाग
11. महिला विभाग जो 1980 में महिला मुक्ति मोर्चा बना
12. रसोई विभाग (यूनियन दफ्तर में सामूहिक रसोई)
13. निर्माण विभाग
14. कानून विभाग
15. पुस्तकालय विभाग
16. प्रचार विभाग
17. स्वेच्छासेवी वाहिनी विभाग
18 पर्यावरण विभाग 1984 में गठित हुआ।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के आंदोलन में महिलाओं की बड़ी भूमिका थी। संगठन की मुखिया बैठक में उल्लेखनीय संख्या में महिलाएं मौजूद होती थीं, लेकिन यह संख्या 50 फीसद नहीं थी। क्योंकि खदानों में ठेका मजदूर दो तरह के काम करते थे- रेजिंग यानी पत्थर तोड़ने का काम मर्द औरत दोनों करते थे, जबकि ट्रांसपोर्टिंग यानी ट्रकों में पत्थर लोड करने का काम सिर्फ मर्द ही करते थे। हर रेजिंग इलाके से पुरुष महिला प्रतिनिधि समान संख्या में चुन लिये जाते थे, जबकि ट्रांसपोर्टिंग में सिर्फ मर्द, वही मोहल्लों से महिला पुरुष प्रतिनिधि बराबर हुआ करते थे। नतीजतन सबको मिलाकर मुखिया बैठक में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की तादाद कुछ कम रह जाती थी। श्रमिक संगठन में महिलाओं की उल्लेखनीय भूमिका थी तो महिला मुक्ति मोर्चा संगठन में महिला मजदूरनें अन्य महिलाओं को संगठित करती थीं।

नियोगी के अभिनव नेतृत्व से आकर्षित होकर छत्तीसगढ़ के व्यापक इलाकों में लोगों ने लाल हरा झंडा फहराना शुरू कर दिया। उस वक्त छत्तीसगढ़ में मध्यप्रदेश के सात जिले थे, जिनमें पांच जिलों दुर्ग, बस्तर, राजनांदगांव, रायपुर, बिलासपुर में छत्तीसगढ़ आंदोलन और संगठन का विस्तार हो गया। इनमें छत्तीसगढ़ के सबसे पुराना कारखाना राजनांदगांव के बेंगल नागपुर काटन मिल के श्रमिक भी शामिल थे। जिनके आंदोलन को तोड़ने के लिए 12 सितंबर, 1984 को पुलिस ने फायरिंग की तो चार लोग शहीद हो गये, लेकिन आंदोलन कामयाब हो गया।

नियोगी जैसा नहीं मिला

शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में लड़ी गयी अंतिम लड़ाई भिलाई का श्रमिक संग्राम रही है। छत्तीसगढ़ में शोषण के केंद्र भिलाई में 1990 में शुरू इस लड़ाई ने कारखाना मालिकों में दहशत पैदा कर दी। हालांकि ऊपरी तौर पर देखने से श्रमिकों की मांगें बहुत मामूली थीं- मसलन जिंदा रहने लायक वेतन, स्थाई उद्योग में स्थाई नौकरी, यूनियन बनाने के अधिकार की मांगें। गौरतलब है कि खनिज, वन उपज और जल संपदा में भरपूर छत्तीसगढ़ सस्ते मजदूरों की मंडी भी है। जाहिर है कि वहीं मजदूरों की ऐसी मांगें मान लेने का असर दीर्घ स्थाई और मालिकान के लिए बेहद भयंकर होता। इसलिए इस आंदोलन को तोड़ने में पुलिस, प्रशासन और लगभग सभी राजनैतिक दलों का गठबंधन हो गया।

श्रमिक नेताओं पर गुंडों और पुलिस के हमले हुए। 4 फरवरी, 1991 से लेकर 3 अप्रैल तक पुराने मुकदमे में नियोगी को कैद रखा गया। नियोगी को पांच जिलों से निकाल बाहर करने की कोशिश भी हो गयी- लेकिन आंदोलन नहीं थमा। आंदोलन के हक में नियोगी के नेतृत्व में एक बड़े श्रमिक प्रतिनिधिमंडल ने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री से मिलकर ज्ञापन दिया। इसके एक पखवाड़े बाद कारखाना मालिकों के गुप्त हत्यारे ने नियोगी की हत्या कर दी।

अपनी हत्या से काफी पहले नियोगी को हत्या की साजिश के बारे में मालूम पड़ गया था। यह सब वे डायरी में लिख कर छोड़ गये, कैसेट में दर्ज करके गये। तब भी आने वाली अनिवार्य मौत से वे बेपरवाह थे, क्योंकि- ''मृत्यु तो सबकी होती है, मेरी भी होगी। आज, नहीं तो कल।... मैं इस पृथ्वी पर ऐसी व्यवस्था बनाकर जाना चाहता हूं जिसमें शोषण नहीं हो...। मैं इस सुंदर पृथ्वी से प्यार करता हूं, इससे ज्यादा प्यार मुझे अपने कर्तव्य से है। जो जिम्मेदारी मैंने अपने कंधे पर ली है, उसे पूरा करना ही है। ..मेरी हत्या करके हमारे आंदोलन को खत्म नहीं किया जा सकता।''

कॉलेज जीवन में जिस गणतांत्रिक छात्र संगठन के साथ मैं बड़ा हुआ, उसके नेतृत्व में मार्क्सवादी लेनिनवादी थे। उनके साथ कभी कभी मैं नियोगी को मिला नहीं पाता था। शक होता कि क्या यह आदमी संशोधनवादी तो नहीं है। 1987 के मई महीने में गिर जाने से नियोगी का पैर टूट गया- फ्रैक्चर नेक फिमर- 3 जून को ऑपरेशन हुआ था। वही एकबार 3 जून के शहीद दिवस पर वे दल्ली राजहरा में नहीं थे। ऑपरेशन के बाद पूरी तरह स्वस्थ होने तक वे शहीद अस्पताल में भर्ती रहे। नियोगी का पैर टूटना मेरे लिए जैसे वरदान बन गया। आहिस्ते आहिस्ते उनके साथ अंतरंगता इसी दरम्यान गहरानी शुरू हो गयी।

इसके बाद तमाम सवाल लेकर मैं उनके पास जाता रहा। घंटों चर्चा की, बहस की, कभी कभार झगड़ा भी खूब कर लिया। भोर हो या गहरी रात, उन्हें राजनीतिक

या सांगठनिक चर्चा में थकते नहीं देखा। चर्चा या बहस के दौरान वे कभी यह समझने ही नहीं देते थे कि मैं उनसे अठारह साल छोटा हूं। विचारधारा के बारे में मेरा ज्ञान या मेरा अनुभव उनके मुकाबले बहुत कम है। राजनैतिक चर्चा में दलीलों की अहमियत थी, लेकिन किसी तरह के अहं के लिए कोई गुंजाइश थी ही नहीं। (छत्तीसगढ़ से लौटकर नब्बे के दशक की शुरुआत में बंगाल को आंदोलित करने वाले एक श्रमिक संग्राम से जुड़ गया। स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत। तब उस आंदोलन के सलाहकार मध्यवर्गीय कुछ नामी श्रमिक नेताओं से नजदीकी हो गयी। तब मैंने देखा नियोगी के साथ उनका कितना जमीन आसमान का फर्क है।)

ऐसा लोकतंत्र नहीं देखा

1979 में छात्र राजनीति शुरू करने के समय से मैं जीवन के अलग अलग चरण में विभिन्न लोकतांत्रिक संगठनों का सदस्य रहा हूं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में लोकतंत्र का जो प्रयोग देखा, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिला। 'भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्या' शीर्षक लेख में नियोगी ने लोकतांत्रिक केंद्रीयता पर एक संक्षिप्त और मूल्यवान चर्चा की है। लोकतांत्रिक केंद्रिकता के आधार पर संगठन चलाने के प्रयास हमने छत्तीस गढ़ मुक्ति मोर्चा के तमाम संगठनों में भी देखे हैं। आंदोलन के बारे में फैसला, संगठन के बारे में विभिन्न मसलों पर फैसला लोकतांत्रिक पद्धति से होता था और उन फैसलों पर अमल केंद्रिकता के माध्यम से होता था।

वास्तव में यह कैसे होता था? हफ्ते में एक रोज शाम का वक्त मुखिया बैठक के लिए तय होता था। खदान के हर इलाके से, शहर के हर मोहल्ले से तीन सौ के करीब मुखिया उस बैठक में होते थे। चर्चा के मसलों पर जितना हो सकें, विस्तार से संवाद होता था। पिछड़े हुए श्रमिक प्रतिनिधि उनकी मौजूदगी में मुंह खोलने में संकोच महसूस कर सकते थे, इसलिए चर्चा के पहले चरण में अमूमन नियोगी मौजूद नहीं होते थे। बहरहाल उस रोज जो फैसला हो जाये, वह अंतिम फैसला नहीं होता था। अगले दिन काम शुरू होने से पहले अपने-अपने इलाके में आम मजदूरों की बैठक करके तमाम मुखिया पिछली शाम की बैठक की रिपोर्टिंग करते थे। आम मजदूर अगर मुखिया बैठक के फैसले को मंजूर कर दें तो फिर संगठन का फैसला होता, वरना मजदूरों की राय लेकर फिर मुखिया बैठक होती। इस तरह फैसला करने से सारे मजदूर उन फैसलों को लागू करने के लिए खुद को जिम्मेदार मान लेते थे। यूनियन के नेता ने चंदा तय कर दिया, कुछ लोगों ने चंदा दिया तो कुछ लोगों ने नहीं दिया, हम अमूमन ऐसा देखने को अभ्यस्त हैं, लेकिन छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा छमुमो के संगठन में ऐसा नहीं होता था। सौ फीसद मजदूर चंदा देते थे, चाहे वह चंदा होलटाइमर के भत्ते के लिए हर मजदूर से एक रुपया का चंदा हो या फिर संसदीय चुनाव में संगठन की लड़ाई के लिए एकमुश्त डेढ़ सौ रुपये। आंदोलन और दूसरे

कार्यक्रमों में बीमार को छोड़कर हर कोई हिस्सा लेता था।

जीवन से घुलामिला मार्क्सवाद-लेनिनवाद

पांच साल मैंने नियोगी को देखा है। देखा है कि एक इंसान किस तरह मार्क्सवाद लेनिनवाद का प्रयोग जीवन में, कामकाज में, हर आंदोलन में कर रहा था। पहले से मेरे देखे मार्क्सवादियों लेनिनवादियों की तरह हर बात पर उद्धरण देते उन्हें मैंने कभी नहीं देखा। मार्क्सवाद उनके लिए किसी किस्म का कट्टरपंथ नहीं था। बल्कि वह मूर्त परिस्थिति का मूर्त विश्लेषण हुआ करता था। यानी एक द्वांद्विक वैज्ञानिक पद्धति।

मैं पेशे बतौर डॉक्टरी करने के साथ राजनीति करने के लिए छत्तीसगढ़ गया था। राजनीति से मेरा मतलब था, बैठक, जुलूस और कुछ कार्यक्रमों में भागेदारी। 1988 में एक बार तो मारपीट की एक घटना में मैं और अनूप सिंह नेतृत्व देने को आगे बढ़ गये। खबर मिलते ही नियोगीजी भागे भागे चले आये और हमें डांट कर खुद हालात संभाल लिये। गुस्सा आ गया था- सिर्फ डॉक्टरी करने के लिए मैं छत्तीसगढ़ चला आया क्या! हमारा दिमाग ठंडा हुआ तो नियोगी हमारे साथ बैठे। सरल और स्पष्ट तौर पर उन्होंने सामाजिक परिवर्तनकामी बुद्धिजीवियों के ऐतिहासिक दायित्व के बारे में समझा दिया- आप लोग हीरो नहीं हैं, असल वीर तो संग्रामी जन गण हैं...आपका काम शिक्षक का है..आप लोग पढ़े लिखे हैं, जिस विज्ञान में आप दक्ष हैं, उस विज्ञान और समाज विज्ञान के सबक मजदूरों किसानों तक पहुंचाना ही आपका कर्तव्य है.. .।' उस दिन के बाद फिर उस तरह की गलती न करने की कोशिश मैंने की है। नियोगी ने जिस दायित्व के बारे में बताया, आज भी उसी दायित्व का निर्वाह करने की कोशिश कर रहा हूं।

कुछ सहकर्मियों की आलोचना में नियोगी क्षमाहीन दीखते थे, उनकी मामूली सी गलती उनकी नजर से बच नहीं सकती थी। मैं देख रहा था कि नियोगीजी मुझसे छोटी सी कोई गलती हो गयी तो तीव्र आलोचना कर देते थे, लेकिन दूसरे किसी बुद्धिजीवी से बड़ी कोई गलती हो जाने के बावजूद वे कुछ भी नहीं कहते थे। मन ही मन क्षोभ बढ़ रहा था। सोचने लगा था कि नियोगीजी पक्षपात कर रहे हैं। एकदिन मैंने उनसे सवाल कर दिया। उन्होंने जबाव दिया, 'जिसे मैं भविष्य की कम्युनिस्ट पार्टी में अपना सहयोद्धा मानता हूं, उसकी भूल भ्रांति की तीव्र आलोचना करके उसे सुधारना मेरी जिम्मेदारी है...। जो सिर्फ साझा मोर्चे में मेरा सहयोद्धा है, उससे मेरा बर्ताव जरूर अलग ही होगा...।' उस दिन से उनकी हर आलोचना मेरा काम्य हो गयी।

सहकर्मियों की छोटी सी छोटी दुःख तकलीफ उनसे नजरअंदाज नहीं हो सकती थी। एक घटना के बारे में बताता हूं- मैंने जब शहीद अस्पताल में काम शुरू किया,

तब दल्ली राजहरा और राजनांदगांव में लंबी हड़ताल चल रही थी। नतीजतन डॉक्टरों का मासिक भत्ता अनियमित हो गया। एक दफा घर जाना था और ट्रेन भाड़ा के सिवाय कुछ भी जेब में नहीं था। संकोचवश मैंने किसी से कुछ नहीं कहा। बस अड्डे जा रहा था। रास्ते में एक मोटर साईकिल मरम्मत करने की दुकान में नियोगी बैठे थे। उन्होंने मुझे पुकार लिया। बिठाकर गपशप करने लगे। बस निकलने का वक्त हो चला। मेरा धीरज टूटने लगा। ऐसे में एक साथी ने दो हजार रुपये लाकर नियोगी को दे दिये और उन्होंने वे रुपये मुझे दे दिये। मुझे घर जाना है, किसी से उन्हें मालूम पड़ा तो एक जगह से उधार रुपये ले आये। सिर्फ मेरे लिए नहीं, सभी सहकर्मियों, संगठन के साधारण सदस्यों के सुख दुःख के प्रति ऐसी नजर वे रखते थे।

1991 के जनवरी महीने में मुझे और नियोगी को कोलकाता जाना था। 25 जनवरी को कृष्णनगर में राज्य के सरकारी कर्मचारियों के कंवेंशन और 26 को मतप्रकाश पत्रिका और नागरिक मंच द्वारा आयोजित सेमीनार में भाग लेना था। बांबे मेल में एक ही रिजर्व बर्थ मिला। नियोगी ने जबरन मुझे अपने बर्थ पर अपने साथ सुला लिया।

नियोगीजी को बार बार मैं कहता था- 'अपने विचारों को लिखिये।' उन्हें लिखने के लिए कम ही मोहलत मिल पाती थी। कई दफा वे कहते रहे- 'डॉक्टर साब, आपके साथ जो चर्चा होती है, लिखते रहिये।' कुछ कुछ लिखा भी है। ज्यादा तवज्जो नहीं दी। मालूम नहीं था कि वे इतनी जल्दी हमें छोड़कर चल देंगे।

कार्यकर्ताओं के विकास के लिए वे बेहद यत्नशील थे। कोई उनके पास सृजनशील कोई परिकल्पना लेकर जाता तो उसे अपरिसीम सहायता मिल जाती। खुद सपना देखते थे। दूसरों को ख्वाब देखना सिखाते थे। कोई ख्वाब को हकीकत में बदलना चाहता तो वे खुश हो जाते।

नियोगी जी की प्रेरणा से बहुत हद तक आंदोलन की जरूरत के मुताबिक मैंने लिखना सीखा। फोटोकार बना और तस्वीरें भी बनायीं। Update from Chhattisgargh पत्रिका के मार्फत भिलाई आंदोलन की शुरुआत से उस आंदोलन की खबर मैंने छत्तीसगढ़ के बाहर पहुंचाने का काम शुरू किया। फिर मैंने छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का प्रकाशन विभाग- 'लोक साहित्य परिषद' का गठन भी कर दिया। शहीद अस्पताल से स्वास्थ्य शिक्षा के मकसद से दो महीने के अंतराल में 'लोक स्वास्थ्य शिक्षामाला' का प्रकाशन शुरू हो गया। इसमें नियोगी वास्तव में कभी हस्तक्षेप नहीं करते थे, लेकिन जरूरत के मुताबिक पैसे, प्रकाशन प्रचार प्रसार में उनकी मदद निरंतर मिलती रही।

घूमने फिरने में मेरी कोई ज्यादा दिलचस्पी कभी नहीं रही है। किंतु नियोगी जी के साथ बाहर निकलने का कोई मौका मैं गवांना नहीं चाहता था, क्योंकि वह हमेशा एक जिंदा क्लास के बराबर हुआ करते थे। 8 सिंतबर, 1991, भिलाई से नियोगी का

फोन आया यूनियन दफ्तर में-'डॉ. गुण को भेजो, मेरे साथ दिल्ली जाना है।' रास्ते भर तरह तरह की योजनाएं बनाते हुए हमने वह सफर तय किया। हम यानी नियोगी, जनक (जनक लाल ठाकुर, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के सभापति, डोंडी लोहरा के पूर्व विधायक) और मैं। Update from Chattisgargh की गुणवत्ता सुधारनी है, छत्तीसगढ़ भाषा के प्रसार के लिए 'लोकसाहित्य परिषद' की 'छत्तीसगढ़ी भाषा प्रसार समिति' का गठन करना है, श्रमिक कवि फागुराम यादव का कैसेट निकालना है, आंदोलन की जीत के बाद भिलाई में अस्पताल बनाना है...ट्रेन में हमने ऐसे कुल्हड़ में चाय पी, जिसकी गरदन संकरी थी और जिससे चाय छलकती न थी। नियोगी ने ऐसा एक कुल्हड़ ले लिया और कहा, छत्तीसगढ़ के कुम्हारों से ऐसे कुल्हड़ बनवाने हैं..।

13 सितंबर 1991 को जनक दूसरे साथियों के साथ लौट आये। नियोगीजी ने मुझे एक दिन के लिए रोक लिया। उन्होंने आंदोलन के अनेक साथियों से मेरा परिचय कराया। बाद में अहसास हुआ कि वे जैसे कामकाज हम लोगों में बांटने लगे थे। दिल्ली रवाना होने से पहले एक मिनी कैसेट में नियोगी ने अपने मन में उमड़ घुमड़ रहे विचारों को रिकॉर्ड कर लिया था- क्योंकि वे जान रहे थे कि उनकी हत्या की साजिश चल रही थी। संगठन के तीन बुद्धिजीवियों और छह मजदूर नेताओं को लेकर एक केंद्रीय निर्णायक समिति के गठन करने की सलाह थी उनकी...। यह कैसेट मैंने पहली बार 5 अक्टूबर 1991 को सुना। अचरज हो रहा था कि अपने आदर्श के प्रति कितना प्रतिबद्ध होने पर कोई व्यक्ति आसन्न मृत्यु के मुकाबले इतना निर्विकार हो सकता है।

आखिरी मुलाकात

जीवित नियोगी जी के साथ मेरी आखिरी मुलाकात 24 सितंबर 1991 को हुई थी। मंगलवार का दिन था और इसलिए अस्पताल में छुट्टी थी। अनसार (राजनंदगांव के संगठक) ने आकर खबर दी-'डॉक्टर साब, नियोगीजी बुला रहे हैं।' कुछ काम कर रहा था। काम में व्यवधान पड़ जाने से थोड़ा परेशान होकर दफ्तर चला गया। नियोगीजी भिलाई जाने वाले थे (दल्ली राजहरा से यही भिलाई के लिए उनकी अंतिम यात्रा थी), उन्हें कुछ फाइलें तैयार करके देनी पड़ी। टेलीफोन नंबरों की, दिल्ली धरना, भिलाई आंदोलन की तस्वीरों की फाइलें, वनखेड़ी कांड की...। उसके बाद नियोगी बोलते रहे। दिल्ली से वापसी के रास्ते वनखेड़ी जाने की कहानी, भोपाल में मुख्यमंत्री पटवा और श्रममंत्री लीलाराम भोजवानी के साथ मुलाकातों के बारे में... पर्यावरण को लेकर उनकी एक किताब छपनी थी, उसका कवर कैसा वे चाहते हैं- विस्तार से ये सारी बातें उन्होंने कही लेकिन, वैसा वे कुछ कर नहीं सकें। Update की गुणवत्ता सुधारनी है, इलेक्ट्रानिक टाइप राइटर ले आने का वायदा किया। शाम को मरीज देखने के राउंड

का वक्त हो रहा था, मैं उठना चाह रहा था, नियोगी जी ने कहा- 'आपसे और कुछ बातें करनी हैं।' उसी वक्त एक ठेकेदार के मैनेजर कुछ समस्याओं को लेकर आ गये। मुझे देरी हो रही थी, अब उठना ही था। नियोगी ने कहा—'जाते वक्त अस्पताल में आपसे मिलकर जाऊंगा।' जो भी वजह रही हो, उस दिन नियोगी आ नहीं सके। उस दिन तो नहीं ही, आगे किसी दिन और नहीं, कभी नहीं।

28 नवंबर, 1991 को तीन श्रमिक साथियों के साथ मिलकर दुर्ग के शव गृह की मेज से खून से लथपथ उनका शव उतारा है। मृत्यु के बाद तब तक करीब नौ घंटे बीत चुके थे, फिर भी उनकी पीठ के जख्म से तब भी ताजा लाल खून निकल रहा था। मेरे नेता, मेरे सहयोद्धा, मेरे शिक्षक शंकर गुहा नियोगी शहीद हो गये। वीर कामरेड का शव हमने छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के लाल हरे झंडे से ढंक दिया।

मृत नियोगी के साथ मैं 28 सितंबर से 29 सितंबर तक रहा। देशी पिस्तौल के बुलेट के छह छर्रों ने उनके हृदय में छेद कर दिये, लेकिन चेहरे पर किसी यंत्रणा की छाप नहीं थी। स्वप्नद्रष्टा मेरे नेता जैसे नींद में कोई सपना देख रहे थे। जैसे 'नियोगीजी' आंखें खोलकर कहेंगे, 'क्या खबर है डॉक्टर साहब!'

नियोगीजी की हत्या के पांच महीने बाद जब पहली बार मैंने उनके संस्मरण सुनाये थे। तब भी कम ही लोगों को यकीन हो पा रहा था कि नियोगीजी अब रहे नहीं। दल्ली राजहरा में हमें लगता था कि वे शायद भिलाई में होंगे। भिलाई के साथियों को लगता शायद वे दल्ली राजहरा में होंगे। जैसे वे हमारे वजूद में शामिल थे। मृत्यु के बाद भी कोई व्यक्ति अपनी विचारधारा में, अपने कामकाज में जिंदा रह सकता है, कामरेड शंकर गुहा नियोगी ने दिखा दिया।

नियोगी के बाद

कामरेड नियोगी ने शहीद का जीवन मांगा है बार बार। 1977 में जिन ग्यारह साथियों ने पुलिस के कब्जे से उन्हें रिहा कराने के लिए शहादतें दीं, राजनंदगांव में वर्ग संघर्ष में चार श्रमिक साथियों की शहादतें- उन सभी के बलिदान को नियोगी हर वक्त याद करते थे। नियोगी की मौत से मुझे अफसोस नहीं हुआ क्योंकि जीवनभर जो मृत्यु उन्होंने मांगी थी, वही उन्हें मिल गयी। वे वर्ग संघर्ष में शहीद हो गये।

हम लोग नियोगी के जो साथी बचे रह गये, हम सभी का और छत्तीसगढ़ के लाखों मेहनतकश लोगों का दायित्व था कि हम उनकी विचारधारा को प्रसारित कर दें, नये छत्तीसगढ़ के निर्माण की लड़ाई तीव्रतर बना दें। जितना काम हम कर सके हैं, उस पर चर्चा हम कभी बाद में करेंगे। जो साथी उनकी विचारधारा को किसी न किसी रूप में अमल में ला रहे हैं, शंकर गुहा नियोगी उनके वजूद में जिंदा हैं।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के विभिन्न अध्याय में गाजी एम अनसार, विज्ञान शिक्षक

अरविंद गुप्ता, अविनाश देशपांडे, कानूनविद राकेश शुक्ला, साहित्यिक पत्रकार सीताराम शास्त्री, आशीष कुंडु, चंचला समाजदार, विनायक सेन, इलिना सेन जैसे बुद्धिजीवियों ने काम किया है। इनमें से अनेक आखिर तक आंदोलन के साथ नहीं रहे हैं। किसी को पारिवारिक जिम्मेदारियां निभाने के लिए छोड़ना पड़ा। कोई आर्थिक कारणों से अलग होने को मजबूर हो गया तो कोई व्यक्ति को समुदाय में समाहित न करने की वजह से। किंतु एक दो अपवादों को छोड़कर बाकी के साथ नियोगी और उनके संगठन का संबंध नहीं टूटा, इसके सबूत नियोगी की हत्या के बाद उनकी श्रद्धांजलियां हैं। मसलन संग्राम और सृजन के नेता नियोगी'-सीताराम शास्त्री नियोगी एक नया माडल बनाना चाहते थे- विनायक सेन, संघर्ष ओ निर्माण, अनुष्टुप प्रकाशन, 1992।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में बिखराव और बिखराव में विभिन्न व्यक्तियों की भूमिका को लेकर तमाम लोगों के अनेक सवाल हैं। कौतुहल भी है। इन तमाम सवालों को जवाब देना इस आलेख के संक्षिप्त परिसर में संभव नहीं है। संक्षेप में समझाने की कोशिश करता हूं। हत्या का पूर्वाभास मिलने पर नियोगी एक माइक्रो कैसेट में अपना बयान दर्ज कर गये हैं। जब वे नहीं रहेंगे, तब संगठन चलाने के लिए एक केंद्रीय निर्णायक समिति (Central Decision making Committee) के गठन का प्रस्ताव वे रखकर गये। उस समिति के सदस्य बतौर वे तीन बुद्धिजीवियों, पांच श्रमिक नेताओं और एक युवा नेता का नाम प्रस्तावित कर गये। इस समिति में पहले विचारधारा पर विवाद शुरू हो गया- वर्ग संघर्ष बनाम वर्ग समझौता विवाद। उसके बाद विचारधारा को लेकर लड़ाई शुरू हो गयी- संगठन लोकतांत्रिक केंद्रिकता की नीति पर चलेगा या फिर संगठन का अगुवाई करने वाला नेतृत्व सारे फैसला करे। इन दोनों विवादों के बीच यह सवाल भी खड़ा हो गया कि संगठन के नेतृत्व पर गैरछत्तीसगढ़ी नेतृत्व ने कब्जा कर लिया है। (संजोग से नेतृत्व के नौ लोगों में जनम से तीन बंगाली थे, एक हरियाणवी, जिन्होंने यह मुद्दा उठाया और पांचवां छत्तीसगढ़ी)। आखिर में दल्ली खदान में मशीनीकरण समझौता का विरोध करने पर केंद्रीय निर्णायक समिति के दो सदस्यों को संगठन से निष्कासित कर दिया गया। इस निष्कासन का विरोध करते हुए भिलाई संगठन के लड़ाकू और हीरावल हिस्से के संगठन से निकल जाने से पहली बार छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का विभाजन हो गया और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (नियोगी पंथी) का गठन हो गया। हालांकि यह संगठन लंबे समय तक नहीं चला। किंतु जिन मुद्दों को लेकर उन्होंने विवाद शुरु किया, उन्हीं को लेकर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का दो और विभाजन हो गया। अब छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नाम से तीन तीन संगठन चल रहे हैं।

इस वक्त मजदूर किसान आंदोलनों और जनांदोलनों का अकाल चल रहा है।

जिससे आम जनता दिशाहीन है। जब एक तरफ वाम दक्षिण निर्विशेष वोट सर्वस्व' राजनीतिक दल जनविरोधी नीतियां अपनाकर बेहिचक उनका प्रयोग कर रहे हैं और दूसरी ओर एक दूसरा समुदाय 'संघर्ष और निर्माण' की सिर्फ जुगाली करते हुए आम जनता की सृजनशील आशा आकांक्षा को, निर्माण को उज्जीवित करने के बदले उन्हें अंकुर में ही तबाह करने के सत्यानाशी खेल में मस्त है, तब शंकर गुहा नियोगी और उनका कामकाज मनुष्यों के संघर्ष के सिलसिले में फिर प्रासांगिक है।

शंकर गुहा नियोगी को लेकर नये सिरे से चर्चा, उन्हें केंद्रित और उनके तमाम प्रयोगों के विश्लेषण, उन पर वृतचित्र निर्माण वगैरह गतिविधियों से उनकी प्रासंगिकता के प्रमाण मिल रहे हैं। लंबे अरसे से अनछपे गुहा नियोगी के लेखों और आंदोलन केंद्रित संकलन संघर्ष ओ निर्माण का नया संस्करण छप कर आया है। नियोगी के आंदोलन से जुड़े अनेक लोग अब नियोगी और दल्ली राजहरा के आंदोलन अपने संस्मरण के जरिये ब्यौरेवार बता रहे हैं। जैसे इलिना सेन की किताब आयी हैः Inside Chattisgargh-A Political Memoir (Penguin)। कहने की जरूरत नहीं है, इन सभी का नजरिया एक सा नहीं है। न होना ही स्वाभाविक है। इनमें से अनेक जैसे गुहा नियोगी के प्रयोगों को संघर्ष के प्रसारित क्षेत्र में लागू किया जा सकता है या नहीं, उसका गहन विश्लेषण कर रहे हैं। वैसे ही अनेक ऐसे हैं जो व्यक्ति नियोगी के आचरण और उनके कामकाज को बहुत तवज्जो नहीं दे रहे हैं बल्कि नकारात्मक ढंग से उसकी कड़ी आलोचना कर रहे हैं। किंतु जैसे भी नियोगी का मूल्यांकन क्यों न हो (यह साफ है कि किसी व्यक्ति के साथी और उसके दुश्मन का नजरिया उसके बारे में एक सा हो ही नहीं सकता) वे इस देश के जन जीवन और जन संघर्ष की दिशा निर्णय के क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा प्रासंगिक हो रहे हैं-इस सच से उनके विरोधी भी इंकार नहीं कर सकते, वरना इतने अरसे बाद नये सिरे से उन्हें नियोगी के खिलाफ कलम चलाना नहीं पड़ता।

कई बार नियोगी के कामकाज को अनेक राजनीतिक लोग अर्थनीतिवादी ट्रेड, यूनियनवादी कार्यकलाप कहकर चिन्हित करते हैं। यह राय गलत है। मजदूरों में सरकार और व्यवस्था बदलने के मकसद से वर्ग नेतृत्व की जरूरत पर वे धारावाहिक रूप में प्रचार करते रहे हैं। उनके ट्रेड यूनियन आंदोलन के तमाम मांग पत्रों, प्रचार पत्रों में इसकी छाप है। उनके संघर्ष और निर्माण राजनीति का पहला वाक्य है कि संघर्ष यानी वर्ग संघर्ष और निर्माण भावी समाज के निर्माताओं का सृजनशील प्रयास है- यह कोई एनजीओ मार्का सुधारात्मक काम नहीं है, बल्कि यह शोषक वर्ग के खिलाफ शोषित वर्ग के युद्ध का ऐलान है। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के रोजमर्रे के कामकाज में इस अवधारणा को देखा जा सकता है।

एक और सवाल काफी बड़े आकार में उठता रहा है कि सर्वहारा वर्ग के हीरावल

दस्ते के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका के बारे में उनकी क्या राय थी, क्या वे लेनिनवादी पार्टी के खिलाफ थे? मृत्यु से पहले रिकार्ड अपने बयान में वाम हठधर्मिता और सत्ता सर्वस्वता विरोधी कम्युनिस्ट पार्टी बनाने की आकांक्षा उन्होंने सुस्पष्ट शब्दों में व्यक्त की है। निजी बातचीत में अनेक बार अन्य दोस्त कम्युनिस्ट क्रांतिकारी गुटों से उन्होंने छत्तीसगढ़ को आधार बनाकर पार्टी बनाने का काम शुरू करने का सुझाव दिया है। इसलिए इन मुद्दों को लेकर जो सवाल खड़े कर रहे हैं, उन्हें कामरेड शंकर गुहा नियोगी के बारे में नये सिरे से सोचना चाहिए।

मसलन आईएससी पास करने के बाद इंजीनियरिंग पढ़ने का मौका मिलने के बावजूद उस मौके को उन्होंने ठुकरा दिया क्योंकि उस मौके के पीछे सिफारिश थी।

बाहैसियत मजदूर काम करते हुए उनका उच्च शिक्षा के लिए प्रयास और उसी के साथ उन्होंने छात्र और मजदूर आंदोलन भी संगठित किये!

मार्क्सवादी लेनिनवादी पार्टी से संपर्क टूटने के बावजूद आजीवन आंदोलन में मार्क्सवाद लेनिनवाद का प्रयोग करते रहने की धारावाहिकता! कम्युनिस्ट आंदोलन की तीन धाराओं के बीच चलते हुए खुद एक नई धारा बन जाना!

श्रमिक आंदोलन को वेतन वृद्धि और बोनस के दायरे से निकाल कर श्रमिकों के समग्र विकास के आंदोलन में बदल देना। फिर भी एक व्यापक इलाके के गरीबों, मजदूरों किसानों की अनेक आर्थिक मांगों को लेकर आंदोलन चलाकर जीत भी उन्होंने हासिल की।

लाखों मजदूर उनके कहे पर जान दे सकते थे, लेकिन अपने बर्ताव आचरण, भाव भंगिमा से उन्हें आम लोगों से अलहदा पहचाना नहीं जा सकता था! यूनियन की संपत्ति जब कई लाख की हो गयी थी, तब भी वे सपरिवार माटी के दो छप्पर वाले घर में रहते थे और खद्दर का पाजामा कुर्ता पहनते थे, जो कभी कभी मैले और फटे हुए भी होते थे। पांवों मे रबर की चप्पल या फिर सस्ते केड्स पहनते थे। उनके नेतृत्व में आंदोलन के नतीजतन मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी दो तीन रुपये से बढ़कर नब्बे रुपये से ज्यादा हो गयी थी, लेकिन मौत से पहले तक होल टाइमर बतौर वे सिर्फ आठ सौ रुपये लेते थे।

संगठन का कामकाज निबटाकर वे आधी आधी रात घर लौटते थे, लेकिन सुबह उठ कर बच्चों को पढ़ाने या फिर घर के पीछे साग सब्जी के बगीचे की देखभाल के लिए थोड़ा वक्त वे जरूर निकाल लेते थे।

वे आंदोलन के मैदान में अजेय सेनापति थे तो काम से फुरसत के दौरान कॉपी कलम निकालकर कवि भी बन जाते थे। उनके सीखने का कोई अंत नहीं था, इसलिए करीब तीस साल तक मजदूर आंदोलन का नेतृत्व करने के बावजूद मौत के दिन उनके

सिरहाने लेनिन की किताब 'आन ट्रेड यूनियंस' खुली हुई थी।

ऐसा सिर्फ एक ही व्यक्ति के लिए संभव था, जिनका नाम था शंकर गुहा नियोगी। 49 साल की उम्र में ही वे छत्तीसगढ़ के लिए किवदंती बन चुके थे। ऑडियो विजुअल मीडिया के हो-हल्ले के इस जमाने से पहले छत्तीसगढ़ से बाहर कम लोग ही उन्हें जानते थे। 28 सितंबार, 1991 को भिलाई के मिल मालिकों ने उनकी गोली मारकर हत्या कर दी तो वे एक अप्रतिरोध्य धारा का नाम बन गये हैं, जिन्हें पूरे देश की जनता पहचानती है।

दल्ली राजहरा का जन स्वास्थ्य आंदोलन और शहीद अस्पताल

अपने परिवार में कई पीढ़ियों के छह छह कमाऊ डॉक्टरों को देखकर डॉक्टर बनने का ख्वाब देखना शुरू किया था। मेडिकल कॉलेज में दाखिले के बाद मेडिकल कॉलेज स्टुडेंट्स एसोसिएशन ने नये सिरे से सपना देखना सिखाने लगा-- डॉ. नर्मन बेथून, डॉ. द्वारका नाथ कोटनीस जैसे डॉक्टर बनने का सपना। किंतु कहां जाऊं? कहां है स्पानी आम जनता का फ्रांको विरोधी आंदोलन, कहां है चीन का मुक्तियुद्ध? निकारागुआ में काम करने की ख्वाहिश जताते हुए निकारागुआ की सांदिनिस्ता सरकार के एक नुमाइंदे को खत लिख मारा था, जवाब कोई लेकिन मिला नहीं। आखिरकार डॉक्टरी की परीक्षा पास करने के तीन साल बाद शहीद अस्पताल में काम के मकसद से जाना हो गया।

छात्र जीवन से दल्ली राजहरा में मजदूरों के स्वास्थ्य आंदोलन के बारे में कहानियां सुन रखी थीं। शहीद अस्पताल की स्थापना से पहले 1981 में मजदूरों के स्वास्थ्य आंदोलन में शरीक होने के लिए जो तीन डॉक्टर गये थे, उनमें से डॉ. पवित्र गुह हमारे छात्र संगठन के संस्थापक सदस्यों में एक थे। (बाकी दो डॉक्टर थे डॉ. विनायक सेन और डॉ. आशीष कुंडु थे।) शहीद अस्पताल की प्रेरणा से जब बेलुड़ में इंदो जापान स्टील के श्रमिकों ने 1983 में श्रमजीवी स्वास्थ्य प्रकल्प का काम शुरू किया, तब उनके साथ हमारा समाजसेवी संगठन पीपुल्स हेल्थ सर्विस एसोसिएशन का सहयोग भी था। हाल में डॉक्टर बना मैं भी उस स्वास्थ्य परियोजना के चिकित्सकों में था।

मैं शहीद अस्पताल में 1986 से लेकर 1994 तक कुल आठ साल रहा हूं। 1995 में पश्चिम बंगाल लौटकर भिलाई श्रमिक आंदोलन की प्रेरणा से कनोड़िया जूट मिल के श्रमिक आंदोलन के स्वास्थ्य कार्यक्रम में शामिल हो गया। चेंगाइल में श्रमिक कृषक मैत्री स्वास्थ्य केंद्र, 1999 में श्रमजीवी स्वास्थ्य उद्योग का गठन, 1999 में बेलियातोड़ में मदन मुखर्जी जन स्वास्थ्य केंद्र, 2000 में बाउड़िया श्रमिक कृषक मैत्री स्वास्थ्य केंद्र, 2007 में बाइनान श्रमिक कृषक मैत्री स्वास्थ्य केन्द्र, 2006-07 में सिंगुर

नंदीग्राम आंदोलन के साथ, 2009 में सुंदरवन की जेम्सपुर में सुंदरवन सीमांत स्वास्थ्य सेवा, 2014 में मेरा सुंदरवन श्रमजीवी अस्पताल के साथ जुड़ना (हालांकि इस अस्पताल की शुरुआत 2002 में हो गयी थी।), श्रमजीवी स्वास्थ्य उद्योग का प्रशिक्षण कार्यक्रम, 2000 में फाउंडेशन फार हेल्थ एक्शन के साथ 'असुख-विसुख' पत्रिका का प्रकाशन, 2011 में 'स्वास्थ्येर वृत्ते' का प्रकाशन--यह सबकुछ असल में उसी रास्ते पर चलने का सिलसिला है, जिस रास्ते पर चलना मैंने 1986 में शुरू किया और दल्ली राजहरा के श्रमिकों ने 1979 में।

स्वास्थ्य आंदालेन की शुरुआत

एक लाख बीस हजार की आबादी वाले दल्ली राजहरा में कोई अस्पताल नहीं था, ऐसा भी नहीं है। भिलाई इस्पात कारखाना का अस्पताल, सरकारी प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, मिशनरी अस्पताल, प्राइवेट प्रैक्टिसनर, झोला छाप डॉक्टर-जाहिर है कि इलाज के तमाम बंदोबस्त पहले से थे। सिर्फ गरीबों का ऐसे इंतजामात में सही इलाज नहीं हो पाता था।

खदान के ठेका मजदूरों और उनके परिजनों को भी ठेकेदार के सिफारिशी खत के जरिये बीएसपी अस्पताल में मुफ्त इलाज का वायदा था। लेकिन वहां वे दूसरे दर्जे के नागरिक थे। डॉक्टरों और नर्सों को उनकी लाल मिट्टी से सराबोर देह को छूने में घिन हो जाती थी।

इसी वजह से दिसंबर, 1979 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की उपाध्यक्ष कुसुम बाई की प्रसव के दौरान इलाज में लापरवाही से मौत हो गयी। उस दिन बीएसपी अस्पताल के सामने चिकित्सा अव्यवस्था के खिलाफ विरोध प्रदर्शन में दस हजार मजदूर जमा हो गये थे। नहीं, उन्होंने अस्पताल में किसी तरह की कोई तोड़ फोड़ नहीं की और न ही किसी डॉक्टर नर्स से कोई बदसलूकी उन्होंने की बल्कि उन लोगों ने एक प्रसुति सदन के निर्माण के लिए शपथ ली ताकि किसी और मां बहन की जान कुसुम बाई की तरह बेमौत चली न जाये।

इस तरह 8 सितंबर, 1980 को शहीद प्रसुति सदन का शिलान्यास हो गया।

श्रमिकों का स्वास्थ्य और ट्रेड यूनियन

1978 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के जो सत्रह विभाग शुरू किये गये, उनमें स्वास्थ्य विभाग भी शामिल था।

'स्वास्थ्य और ट्रेड यूनियन' शीर्षक निबंध में कामरेड शंकर गुहा नियोगी ने कहा है- 'संभवतः भारत में ट्रेड यूनियनों ने मजदूरों की सेहत के सवाल को अपने समूचे कार्यक्रम के तहत स्वतंत्र मुद्दा बतौर पर कभी शामिल नहीं किया है। यदि कभी

स्वास्थ्य के प्रश्न को शामिल भी किया है तो उसे पूंजीवादी विचारधारा के ढांचे के अंतर्गत ही रखा गया है। इस तरह ट्रेड यूनियनों ने चिकित्सा की पर्याप्त व्यवस्था, कार्यस्थल पर चोट या जख्म की वजह से विकलांगता के लिए मुआवजा और काम करते हुए विकलांग हो जाने पर श्रमिकों को मानवता की खातिर वैकल्पिक रोजगार देने के मुद्दों तक ही खुद को सीमित रखा है।

हमें यह सवाल उठाना होगा कि सही आवास, स्कूल, चिकित्सा, सफाई, जल, इत्यादि स्वस्थ जीवन के लिए जरूरी व्यवस्थाओं की जिम्मेदारी मालिकान लें। मजदूर वर्ग सामाजिक बदलाव का हीरावल दस्ता है, तो यह उसकी जिम्मेदारी बनती है कि वह अधिक प्रगतिशील वैकल्पिक सामाजिक प्रणालियों की खोज और उन्हें आजमाने के लिए विचार विमर्श करें और परीक्षण प्रयोग भी। इसके अंतर्गत वैकल्पिक स्वास्थ्य प्रणाली भी शामिल है। इसके साथ साथ यह भी जरूरी है कि श्रमिक वर्ग आज के उपलब्ध उपकरण और शक्ति पर निर्भर विकल्प नमूना भी स्थापित करने की कोशिश जरूर करें।'

इस निबंध में नियोगी की जिस अवधारणा का परिचय मिला, बाद में वही 'संघर्ष और निर्माण की विचारधारा' में तब्दील हो गयी। संघर्ष और निर्माण राजनीति का सबसे सुंदर प्रयोग हुआ शहीद अस्पताल के निर्माण में। (हम उसी अवधारणा का प्रयोग हमारे चिकित्सा प्रतिष्ठानों में अब कर रहे हैं)

'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो'

15 अगस्त, 1981 को स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो कार्यक्रम की शुरुआत कर दी गयी। उस वक्त के पंफलेट में जिन मुद्दों को रखा गया था, जो मैंने देखा, वे इस प्रकार हैं:

- टीबी की चिकित्सा का इंतजाम करना।
- गर्भवती महिलाओं के नाम पंजीकृत करना, उनकी देखभाल इस तरह करना ताकि सुरक्षित प्रसव सुनिश्चित हो जाये और बच्चे स्वस्थ हों।
- बच्चों की देखभाल और उनके पालन पोषण का इंतजाम, सही वक्त पर उनका टीकाकरण।
- एक स्वास्थ्य केंद्र का संचालन, खासतौर पर उन सभी के लिए जिन्हें भिलाई स्टील प्लांट अस्पताल में इलाज कराने की सुविधा नहीं मिलती।
- एक अस्पताल का संचालन, जहां देहाती किसानों को जरुरी चिकित्सा सेवाएं मुहैय्या करायी जा सकें।
- पर्यावरण को स्वस्थ रखना, खासतौर पर शुद्ध पेयजल की जरुरत के बारे में घर घर जानकारी पहुंचाना। इसी तरह हैजा और दूसरे रोगों के संक्रमण

की रोकथाम करना।

- संगठन और आंदोलन में शरीक हर परिवार के संबंध में तमाम तथ्य संग्रह और उनका विश्लेषण।
- संगठन के जो सदस्य स्वास्थ्य के क्षेत्र में काम करने के इच्छुक हों, उन्हें प्रशिक्षित करके 'स्वास्थ्य संरक्षक' बनाना और उनके जरिये प्राथमिक चिकित्सा और अन्य स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करना।

सफाई आंदोलन से...

दल्ली राजहरा की मजदूर बस्तियों में सफाई का कोई इंतजाम नहीं था। फिर एक दिन मजदूर बस्तियों के तमाम मर्द, औरतों, छात्रों, युवाओं और व्यावसायियों ने मिलकर मोहल्ले का सारा मैला एक जगह इकट्ठा कर लिया। इसके बाद खदानों से माल ढोने के लिए जाने वाले तेरह ट्रकों में भरकर वह सारा मैला माइंस मैनेजर के क्वार्टर के सामने ले जाया गया। मैनेजर को चेतावनी दे दी गयी कि- मजदूर बस्तियों को साफ सुथरा रखने का बंदोबस्त अगर नहीं न हुआ तो रोज सारा मैला माइंस मैनेजर के क्वार्टर के आगे लाकर फेंक दिया जायेगा।

डॉक्टर आ गये

1981 में खदान मजदूरों के एक आंदोलन के सिलसिले में शंकर गुहा नियोगी तब राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (रासुका) के तहत जेल में कैद थे। दूसरी तरफ, प्रशासन मजदूर आंदोलन को तोड़कर टुकड़ा टुकड़ा करने के मकसद से तरह तरह के दमनात्मक कार्रवाई में लगा हुआ था। तभी पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज की एक जांच टीम के सदस्य बतौर डॉ. विनायक सेन दल्ली राजहरा आ गये। जेएनयू के सेंटर ऑफ सोशल मेडिसिन एंड कम्युनिटी हेल्थ में 1976 से 1978 तक अध्यापन करने के बाद 1978 से फिर नये सिरे से जिंदगी का मायने खोजने के मकसद से वे होशंगाबाद जिले के फ्रेंड्स रुरल सेंटर में टीबी मरीजों को लेकर काम करने लगे थे। उनके साथ आ गयी समाज वैज्ञानिक उनकी पत्नी डॉ. इलिना सेन।

करीब करीब उसी वक्त डॉ. आशीष कुंडु भी आ गये। बंगाल में क्रांतिकारी मेडिकल छात्र आंदोलन के अन्यतम संगठक आशीष हाउसस्टाफशिप खत्म करके मेहनतकश आवाम के संघर्षों में अपनी पेशेवर जिंदगी समाहित करने के लिए तब मजदूर आंदोलन के तमाम केंद्रों में काम के मौके खोज रहे थे। उसके छह महीने बाद डॉ. पवित्र गुह उनके साथ हो गये। निजी कुछ समस्याओं की वजह से वे इस दफा ज्यादा वक्त तक रह नहीं सके। वे फिर शहीद अस्पताल से नियोगी की शहादत के बाद 1992 में जुड़ गये। अब भी वे दल्ली राजहरा में हैं।

ये लोग मोहल्ला दर मोहल्ला और खदानों में काम शुरू होने से पहले खदान के विभिन्न इलाकों में छोटी छोटी सभाएं करके स्वास्थ्य शिक्षा अभियान चला रहे थे।

स्वास्थ्य कमिटी

पहले ही मैंने यूनियन के सत्रह विभागों में खास स्वास्थ्य विभाग की चर्चा की है। इस विभाग का काम था, बीएसपी अस्पताल में मरीज के दाखिले के बाद उनकी देखभाल करना। फिर सत्तर के दशक से अस्सी के दशक की शुरुआत तक जो शराबबंदी आंदोलन (मद्यपान निषेध आंदोलन) चला, उसमें यूं तो समूची यूनियन शामिल थी, लेकिन उसमें भी स्वास्थ्य विभाग की भूमिका खास थी। 81 के सफाई आंदोलन में कामयाबी की वजह से, चिकित्सकों के प्रचार अभियान के लिए प्रशिक्षित होने के बाद जो सौ से ज्यादा मजदूर सामने आ गये, उन्हें और डॉक्टरों को लेकर स्वास्थ्य कमिटी बना दी गयी।

26 जनवरी, 1982 से यूनियन दफ्तर के बगल के गैराज में सुबह शाम दो दफा स्वास्थ्य सेवा का काम शहीद डिस्पेंसरी में शुरू हो गया। स्वास्थ्य कमिटी के कुछ सदस्यों ने पालियों में डिस्पेंसरी चलाने में डॉक्टरों की मदद करने लगे। डॉक्टरों ने भी उन्हें स्वास्थकर्मी बतौर प्रशिक्षित करना शुरू कर दिया। अब स्वास्थ्य कमिटी के बाकी सदस्यों के जिम्मे था अस्पताल का निर्माण। 26 जनवरी, 1982 से 3 जून, 1983 की अवधि में अस्पताल चालू होने से पहले करीब छह हजार लोगों की चिकित्सा शहीद डिस्पेंसरी में हुई।

बुजुर्ग-विमान मजदूर ने किया शहीद अस्पताल का उद्घाटन

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के जन्म के बाद घर बनाने के लिए बांस बल्ली भत्ता की मांग लेकर आंदोलन कर रहे मजदूरों के आंदोलन को तोड़ने के लिए 2 जून, 1977 को यूनियन दफ्तर से पुलिस ने कामरेड नियोगी को अगवा कर लिया। अपने नेता की रिहाई की मांग लेकर मजदूरों ने पुलिस के दूसरे दल को घेर लिया। उस घेराव को तोड़ने के लिए पुलिस ने पहलीबार 2 जून 1977 की रात, फिर अगले दिन जिला शहर से भारी पुलिस वाहिनी के आने के बाद दूसरी बार मजदूरों पर गोली चला कर घेराव में कैद पुलिसवालों को निकाला। 2-3 जून के गोलीकांड में ग्यारह मजदूर शहीद हो गये- अनुसुइया बाई, जगदीश, सुदामा, टिभुराम, सोनउदास, रामदयाल, हेमनाथ, समरु, पुनउराम, डेहरलाल और जयलाल। इन शहीदों की स्मृति में 1983 के शहीद दिवस पर शहीद अस्पताल का उद्बोधन हुआ। बाहैसियत मजदूर किसान मैत्री के प्रतीक खदान के सबसे वरिष्ठ मजदूर लहर सिंह और आसपास के गांवों में सबसे बुजुर्ग किसान हलाल खोर ने अस्पताल का द्वारा उद्घाटन किया। उस दिन श्रमिक

संघ के पंफलेट में नारा दिया गया- 'तुमने मौत दी, हमने जिंदगी'- तुम शासकों ने मौत बांटी है, हम जिंदगी देंगे।

मजदूरों के श्रम से ही किसी अस्पताल का निर्माण हो पाता है, किंतु छत्तीसगढ़ के लोहा खदानों के मजदूरों के स्वेच्छा श्रम से बने शहीद अस्पताल ही भारत का पहला ऐसा अस्पताल है, जिसका संचालन प्रत्यक्ष तौर पर मजदूर ही कर रहे थे। शहीद अस्पताल का सही मायने यह हुआ- 'मेहनतकशों के लिए मेहनतकशों का अपना कार्यक्रम'- मेहनतकश आवाम के लिए मेहनतकशों का अपना कार्यक्रम। अस्पताल शुरू होने से पहले डिस्पेंसरी पर्व में डॉ. शैबाल जाना उससे जुड़ गये। अस्पताल शुरू हो जाने के बाद 1984 में डॉ. चंचला समाजदार भी पहुंच गयीं।

शहीद अस्पताल एक नजर में

जिला सदर दुर्ग 84 किमी दूर, राजनांदगांव 62 किमी दूर, 66 किमी दूरी पर रायपुर जिले का धमतरी, दूसरी तरफ बस्तर जिले से सटा डोण्डी- इनके मध्य एक विशाल आदिवासी बहुल इलाके के गरीबों के इलाज के लिए मुख्य सहारा बन गया शहीद अस्पताल। (यह जो भौगोलिक स्थिति का ब्यौरा मैंने दिया है, वह छोटा अलग राज्य छत्तीसगढ़ बनने से पहले का है। अब दल्ली राजहरा बालाद जिले में है।)

मंगलवार को छोड़कर हफ्ते में छह दिन सुबह 9.30 बजे से 12.30 तक और शाम को 4.30 से 7.30 तक आउटडोर खुला रहता। इमरजेंसी के लिए अस्पताल हर रोज चौबीसों घंटे खुला मिलता। 1983 में अस्पताल की शुरुआत के वक्त बेड की संख्या 15 थी, 1989 में दोमंजिला बनने के बाद वह संख्या बढ़कर 45 हो गयी, हालांकि अतिरिक्त बेड (मरीजों के घर से लायी गयी खटिया) मिलाकर कुल 72 मरीजों को भरती किया जा सकता था। अस्पताल में सुलभ दवाएं भी खरीदने को मिलती हैं। पैथोलॉजी, एक्सरे, ईसीजी जैसे इंतजाम हैं। आपरेशन थिएटर और एंबुलेंस भी है।

चिकित्साकर्मियों में डॉक्टरों के अलावा सिवाय एक नर्स को छोड़कर कोई संस्थागत तौर पर प्रशिक्षित नहीं था। मजदूर किसान परिवारों के बच्चे प्रशिक्षित होकर चिकित्साकर्मी का काम शहीद अस्पताल में कर रहे थे। अस्पताल के लिए बड़ी संपदा बतौर मजदूर स्वेच्छा सेवकों की टीम थी। ये मजदूर स्वेच्छा सेवक ही शहीद डिस्पेंसरी के समय से डॉक्टरों के साथ काम कर रहे थे, जो आजीविका के लिए खदान में काम करते थे और शाम को और छुट्टी के दिन बिना पारिश्रामिक स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत काम करते थे।

सिर्फ इलाज नहीं बल्कि, जनता को स्वास्थ्य के प्रति सजग बनाना और स्वास्थ्य आंदोलन संगठित करना शहीद अस्पताल का काम था।

किनके पैसे से बना अस्पताल?

1983 में 15 बेड के एक मंजिला अस्पताल से 1994 में आधुनिक सुविधाओं से लैस विशाल अस्पताल का निर्माण हुआ। सवाल होगा कि इतना पैसा कहां से आया?

उस वक्त शहीद अस्पताल का निर्माण पूरी तरह मजदूरों के पैसे से हुआ। शुभेच्छुओं ने बार बार मदद की पेशकश भी की, लेकिन मजदूरों ने विनम्रता पूर्वक मदद लेने से इंकार कर दिया। क्योंकि वे अपने सामर्थ्य को तौलना चाहते थे। शहीद अस्पताल के लोकप्रिय होने के बाद देशी विदेशी फंडिंग एजंसियों की तरफ से आर्थिक अनुदान के प्रचुर प्रस्ताव आते रहे, लेकिन उन तमाम प्रस्तावों को दृढ़ता के साथ खारिज कर दिया जाता रहा क्योंकि मजदूरों को अच्छी तरह मालूम था कि बाहर से आने वाला पैसे का सीधा मतलब बाहरी नियंत्रण होता है।

'आइडल वेज' या 'फाल बैक वेज' के बारे में हममें से ज्यादातर लोग जानते नहीं हैं। मजदूर काम पर चले गये लेकिन मालिक किसी वजह से काम नहीं दे सके तो ऐसे हालात में न्यूनतम मजूरी का अस्सी फीसद 'फाल बैक वेज' बतौर मजूरों को मिलना चाहिए। दल्ली राजहरा के मजदूरों ने ही सबसे पहले फाल बैक वेज वसूल किया। उसी पैसे से अस्पताल के निर्माण के लिए ईंट-पत्थर-लोहा-सीमेंट खरीदे गये। यह सारा माल ढोने के लिए छोटे ट्रकों के मालिकों के संगठन प्रगतिशील ट्रक ओनर्स एसोसिएशन ने मदद की। अस्पताल के तमाम आसबाब सहयोगी संस्था शहीद इंजीनियरिंग वर्कशाप के साथियों ने बना दिये।

अस्पताल की शुरुआत के दौरान यूनियन के हर सदस्य ने महीनेभर का माइंस एलाउंस और मकान किराया भत्ता चंदा बतौर दे दिये। इस पैसे के कुछ हिस्से से दवाइयां और तमाम यंत्र खरीद लिये गये। बाकी पैसे से एक पुराना ट्रक खरीद लिया गया, जिसे वाटर टैंकर में बदल दिया गया। वह ट्रक खदान में पेयजल ले जाता था वह ट्रक और उस कमाई से डॉक्टरों का भत्ता आता था। शुरुआत में पैसा इसी तरह आया। इसके बाद जितनी बार कोई विकास हुआ, निर्माण हुआ या बड़ा कोई यंत्र खरीदा गया, मजदूरों ने चंदा करके पैसे जुगाड़ लिये।

अस्पताल चलाने के लिए कर्मचारियों के भत्ते वगैरह मद में जो पैसे चाहिए थे- उसके लिए मरीजों को थोड़ा खर्च करना पड़ा। आउटडोर में मरीजों के देखने के लिए पचास पैसे (जो बढ़कर बाद में एक रुपया हुआ) और दाखिले के बाद बेड भाड़ा बाबत तीन रुपये रोज (जो बाद में बढ़कर पांच रुपये रोज हो गया) मरीजों को देने होते थे। लेकिन आंदोलनरत बेरोजगार मजदूरों और उनके परिजनों, संगठन के होल टाइमरों और बेहद गरीब मरीजों के सभी स्तर का इलाज मुफ्त था।

इस तरह स्थानीय संसाधनों के दम पर आत्मनिर्भरता की राह पर बढ़ता चला

गया शहीद अस्पताल।

तर्कसंगत वैज्ञानिक चिकित्सा के लिए लड़ाई

एक तरफ परंपरागत ओझा- बाइगा की झाड़ फूंक, तुकताक, दूसरी तरफ पास और बिना किसी पास के चिकित्सा कारोबारियों का गैर जरूरी नुकसानदेह दवाओं का अंधाधुंध इस्तेमाल- इस दुधारी दुश्चक्र में फंसे हुए थे दल्ली राजहरा के लोग। वैज्ञानिक चिकित्सा की अवधारणा सिरे से अनुपस्थित थी। कुछ उदाहरणों से आप बेहतर समझ सकते हैं- मसलन मेहनत के मारे थके हारे खदान मजदूरों को यकीन था कि लाल रंग के विटामिन इंजेक्शन और कैल्सियम इंजेक्शन से उनकी कमजोरी दूर हो जायेगी। बुखार उतारने के लिए अक्सर प्रतिबंधित एनालजिन इंजेक्शन इस्तेमाल में लाया जाता था- जिससे खून में श्वेत रक्त कोशिकाओं का क्षय हो जाता, लीवर किडनी नष्ट हो जाते। प्रसव जल्दी कराने के लिए पिटोसिन इंजेक्शन का इस्तेमाल होता था- जिससे गर्भाशय में तीव्र संकोचन की वजह से गर्भाशय फट जाने की वजह से मां की मौत का जोखिम बना रहता। ...

दल्ली राजहरा का मजदूरों के स्वास्थ्य आंदोलन ही समसामयिक भारत में दवाओं के तर्कसंगत इस्तेमाल का आंदोलन रहा है। मजदूरों को जिन डॉक्टरों का साथ मिला, वे सभी इस आंदोलन के साथी हैं- जिनमें से कोई पश्चिम बंगाल ड्रग एक्शन फोरम के साथ जुड़ा था तो कोई आल इंडिया ड्रग एक्शन नेटवर्क से जुड़ा। दवाओं के तर्कसंगत प्रयोग की अवधारणा का बड़े पैमाने पर प्रयोग क्षेत्र बन गया शहीद अस्पताल।

जहां घरेलू नूस्खे से इलाज संभव था, वहां दवाओं के इस्तेमाल का विरोध किया जाता था। मसलन- पेट की तकलीफों की वजह से नमक पानी की कमी को दुरुस्त करने के लिए पैकेट बंद ओआरएस के बदले नमक चीनी नींबू का शरबत बनाकर पीने के लिए कहा जाता था। एनालजिन इंजेक्शन के बदले बुखार उतारने के लिए ठंडा पानी से शरीर को पोंछने के लिए कहा जाता था। खांसी के इलाज के लिए कफ सिरप के बदले गर्म पानी की भाप लेने की सलाह दी जाती थी...दवा का इस्तेमाल तब किया जाता था, जब वह विश्व स्वास्थ्य संस्था की अत्यावश्यक दवाओं की सूची के मुताबिक हो। डॉक्टर सिर्फ दवाओं के जेनरिक नाम लिखते थे। बहुत कम विज्ञानसंगत अपवादों को छोड़कर एक से ज्यादा दवाओं का निर्दिष्ट मात्रा में मिश्रण का कतई इस्तेमाल नहीं किया जाता था। एनाल्जिन, फिनाइलबिउटाजोन, अक्जीफेनबिउटाजोन इत्यादि तमाम नुकसानदेह दवाइयां का इस्तेमाल नहीं होता था। प्रिसक्रिप्शन पर लिखा नहीं जाता था- कफ सिरप, टॉनिक, हजमी एनजाइम, हिमाटिनिक, इत्यादि की तरह

गैर जरुरी दवाएं। जहां मुंह से खाने की दवा से काम चल जाता था, वहां इंजेक्शन का प्रयोग नहीं किया जाता था।

शहीद अस्पताल में सर्जरी

अलग से इस विभाग के बारे में लिख रहा हूं क्योंकि लोगों से अगर प्यार हो तो कम साधनों के बावजूद कितना ज्यादा काम किया जा सकता है, किस तरह आहिस्ते आहिस्ते विकास संभव है-उसका सुंदर उदाहरण यह विभाग है। एक और वजह है कि योग्यता के मुताबिक जनरल फीजिशियन होने के बावजूद सर्जरी के प्रशिक्षण (हाउसस्टाफशिप) के सौजन्य से मैंने इस विभाग में बाहैसियत इंचार्ज आठ साल तक काम किया है। 18 फीट और 11 फीट के एक सामान्य साफ सुथरे कमरे में ही पहले दस साल तक यह ऑपरेशन थियेटर का काम होता रहा। बगल में 8.5 फीट और 6 फीट एक कमरे का ऑपरेशन का सामान रखने के लिए इस्तेमाल होता था। एक ड्रम के अटोक्लेव में सामग्री विषाणु मुक्त कर दी जाती थी। घर को ऑपरेशन से पहले रात में गंधक जला कर जीवाणु रहित बनाया जाता था। 200 वाट के बल्व से रोशनी का इंतजाम था। बड़े ऑपरेशन के दौरान आठ बैटरी टार्च का इस्तेमाल होता था। रोगी को बेहोश करने के लिए ओपेन इथर एनेस्थेसिया दिया जाता था, प्रागैतिहासिक जमाने की यह पद्धति काफी सुरक्षित थी। जहां संभव होता था, लोकल एनेस्थिशिया का प्रयोग किया जाता रहा है। जिन अस्पतालों में पहले काम किया है, उसके मुकाबले माहौल एकदम अलहदा। चीन के युद्ध क्षेत्र में कम उपकरणों के साथ डॉ. नर्मन बेथून और डॉ. कोटनिस के बड़े बड़े ऑपरेशन करते रहने की कहानियां हमारे लिए प्रेरणा बन गयीं। हम यह सोच रहे थे कि उनके मुकाबले तो हमारे उपकरण ज्यादा हैं। थोड़े बहुत जो उपकरण थे, उनसे पहले पहल फोड़ा काटने, जख्म सिलाई करने के अलावा हाइड्रोसिल, बवासीर, भगदंर के ऑपरेशन किये जाते थे। धीरे धीरे यंत्र वगैरह का जुगाड़ होता रहा और ऑपरेशन की संख्या, तौर तरीके और महत्व में वृद्धि भी होती रही।

बड़े ऑपरेशन की शुरुआत एक इमरजेंसी केस से हुई। याद है कि पहला मरीज एक तीन साल का बच्चा था। उसे गांव से आंत्रिक अवरोध (Intestinal obstruction) के साथ अस्पताल लाया गया था। ऐसा संकट खड़ा हो गया कि उसे बड़े शहर भेजना संभव नहीं था। छोटा retractor नहीं था। tongue depressor से काम चलाया गया। खोल कर देखा गया कि क्षुद्र अंत्र का एक हिस्सा सड़ गया था। जिसे काटकर स्वस्थ दोनों सिरों को जोड़ देना था। Intestinal clamp की जरूरत थी। यह क्लांप लगाने पर अंत्र से मल निकल नहीं सकता था और कटे हुए आंतरिक हिस्से से खून का बहना भी रोका जा सकता था। इस अभाव को पूरा करने के लिए एक और

असिस्टेंट की मदद ली गयी। जिसका काम था कि दोनों हाथों की दो उंगलियों से अंत्र के दोनों सिरे को पकड़े रहे। बिना किसी बाधा के यह ऑपरेशन कामयाब रहा। दूसरा मरीज वयस्क था। उसे पेप्टिक परफोरेशन की बीमारी थी। बीमारी की ठीक स्थिति जानने के लिए एक्सरे करके देखना था कि मध्यच्छदा के नीचे लीवर पर गैस की छाया है या नहीं। उस वक्त शहीद अस्पताल में एक्सरे मशीन नहीं थी। दल्ली राजहरा में तब मिशनरी पुष्पा अस्पताल में ही एक्सरे होता था, वहां भी शाम के बाद एक्सरे होता नहीं था। ऐसे हालात में मजबूरन क्लिनिकल डायग्नोसिस के भरोसे पेट खोलना पड़ गया..।

आहिस्ते आहिस्ते शल्य चिकित्सा केंद्र बतौर शहीद अस्पताल की साख बनती चली गयी। बीएसपी अस्पताल में एमएस डिग्री वाले सर्जन, गाइनाक्लोजिस्ट सारे थे। लेकिन थोड़ा बड़ा ऑपरेशन का मामला बनते ही वे मरीज को भिलाई मेन अस्पताल भेज दिया करते थे। 91 किमी का रास्ता तय करके ज्यादातर मरीज वहां तक जिंदा पहुंच नहीं पाते थे। तब शहीद अस्पताल में एमबीबीएस डॉक्टरों को ऑपरेशन करना होता था। एनेस्थेसिया जो देते थे, वे अपढ़ थे, लेकिन उनके हाथों ओपेन एनेस्थिशिया से किसी मरीज की कोई मौत कभी नहीं हुई। बाद में वे एयर इथर मशीन के इस्तेमाल में भी दक्ष हो गये।

सबसे बड़ी असुविधा यह थी कि एक ही कमरे में आपरेशन और प्रसव संपन्न कराने होते थे। 1989 में एक आंदोलन में बड़ी आर्थिक जीत के बाद मजदूरों ने एक आधुनिक ओटी कॉम्प्लेक्स के निर्माण का बीड़ा उठा लिया। सफेद पत्थर की फर्श वाले चार कमरों का यह ऑपरेशन कॉम्प्लेक्स किसी भी आधुनिक अस्पताल के टक्कर का बन गया। किंतु सीमित उपकरणों के दौर में सीमित क्षमता के साथ संकट के मुकाबले के लिए चिकित्सकों और स्वास्थ्यकर्मियों ने जिन वैकल्पिक उपकरणों का आविष्कार कर लिया था, उन्हें भी नये ओटी में स्थान मिल गया। 1993 में नया ओटी चालू होने के बाद पुराने कमरे का इस्तेमाल माइनर ओटी और लेबर रुम बतौर होने लगा।

धीरे-धीरे साख ऐसी बन पड़ी कि जो लोग मुफ्त में बीएसपी अस्पताल में ऑपरेशन करा सकते थे, वे भी पैसा (कम होने के बावजूद) खर्च करके शहीद अस्पताल में ऑपरेशन कराने लगे।

परीक्षण-निरीक्षण की व्यवस्था

पहले पहल मरीज की जांच करने के लिए डॉक्टरों के कमरे के बगल में 8.5 फीट और 4.5 फीट वाली छोटी सी जगह पर लैबोरेटरी थी। रक्त, मल-मूत्र की सामान्य जांच, कफ परीक्षा, वीर्य परीक्षण का काम मदन नाम का एक आदिवासी युवक किया करता

था। मदन पहले ट्रक में हेल्पर था। टीबी की वजह से फेफड़े के चारों तरफ पानी जमा हो जाने की वजह से इलाज के लिए वह कई महीने शहीद अस्पताल में भर्ती रहा। उसी दौरान डॉ. शैबाल जाना से प्रशिक्षण लेकर इस काम में वह दक्ष हो गया।

लैबोरेटरी की आय जमा करके उन्हीं पैसे से क्रमशः बिजली से चलने वाले सेंट्रीफिउज, कलरीमीटर, इनक्यूबेटर जैसे यंत्र खरीद लिये गये। 1993 की शुरुआत में एक बड़े लैबोरेटरी कक्ष का निर्माण कर लिया गया, जहां शहीद अस्पताल में ही काम सीखने वाले तीन कर्मचारी काम करने लगे। जहां जांच पड़ताल का खर्च बाजार की तुलना में एक चौथाई से लेकर आधा तक था।

पहले साधारण एक्सरे के लिए मरीज को पुष्पा अस्पताल भेजना पड़ता था और खास एक्सरे के लिए दुर्ग या भिलाई। सितंबर, 1993 में 20 एमए की एक एक्सरे मशीन खरीद ली गयी। अस्पताल की बचत कुछ थी, बाकी रुपये का एक हिस्सा प्रगतिशील ट्रक ओनर्स एसोसिएशन के सदस्यों ने दान में दे दिया तो बाकी हिस्सा बिना ब्याज के दीर्घकालीन कर्ज से जुगाड़ हुआ। एक्सरे टेक्नीशियन बतौर श्रमिक परिवार के एक उच्च माध्यमिक पास युवा को मनोनीत कर लिया गया, कोलकाता के एक रेडियोलाजिस्ट मित्र ने उसे छह महीने तक अपने साथ रखकर कामकाज सीखा दिया। फरवरी, 1994 में ईसीजी मशीन भी आ गयी।

एंबुलेंस का इंतजाम

1990 से पहले दल्ली राजहरा से किसी मरीज को दुर्ग, भिलाई या रायपुर ले जाना उसके परिवार के लिए दुरूह काम होता था। क्योंकि एंबुलेंस सिर्फ बीएसपी अस्पताल के पास था और भिलाई यानी 91 किमी की दूरी तय करने के लिए भाड़ा बतौर साढ़े तीन हजार से ज्यादा रुपये चुकाने होते थे।

लंबे अरसे से एंबुलेंस खरीदने की योजना बन रही थी। किंतु दो लाख से ज्यादा की रकम कहां से आती? 1989 में मशीनीकरण विरोधी आंदोलन में जीत हासिल करने के बाद बीएसपी के कुछ जूनियर अफसर यूनियन के कामकाज से प्रभावित हो गये और उन्होंने शहीद अस्पताल के लिए कुछ सामग्री दान में देने की पेशकश कर दी। नियोगी ने उन्हें कह दिया- अस्पताल के लिए बाहर से दान नहीं लिया जाता है। उन्होंने सुझाव दिया कि वे कोई ऐसा इंतजाम कर दें जिससे यूनियन बीएसपी की बेकार पड़ी एंबुलेंस खरीद सके। बारह हजार रुपये में वह बेकार पड़ा एंबुलेंस खरीद लिया गया और उसे चालू हालत में लाने के लिए अट्ठाइस हजार रुपये और खर्च हो गये। बहरहाल चालीस हजार रुपये में नया जैसा एंबुलेंस मिल गया।

फिर एंबुलेंस का भाड़ा तय करने के लिए एक नागरिक सभा बुलायी गयी। उस सभा में प्रति किमी डेढ़ रुपये की दर से भाड़ा तय किया गया। इसके मुताबिक भिलाई

जाने में सिर्फ 270 रुपये का भाड़ा तय हो गया। जो बीएसपी के एंबुलेंस के भाड़ा के मुकाबले 0.077 फीसद था। इसके अलावा गरीब मरीजों के लिए भाड़ा माफ करने का इंतजाम भी हो गया। इतना कम भाड़ा लेने के बावजूद एंबुलेंस की आय से ही डीजल और मरम्मत, ड्राइवर के भत्ते का इंतजाम हो गया।

एक अभिनव ब्लड बैंक

दल्ली राजहरा में कोई ब्लड बैंक नहीं था। फिर भी खून के अभाव में मरने वालों की संख्या शून्य हो गयी। बाकी किसी भी जगह की तरह दल्ली रजहरा में भी रक्तदान के बारे में लोगों के मन में डर बैठा था। गलत फहमियां थीं। उसे दूर करने के लिए दीवाल पत्रिका, पोस्टर प्रदर्शनी के जरिये प्रचार अभियान चलाया गया। लोक स्वास्थ्य शिक्षामाला के तहत पुस्तिकाः 'रक्तदान के बारे में सही जानकारी'। का प्रकाशन किया गया। लोगों का डर खत्म करने के लिए अस्पताल के डॉक्टर, कर्मचारी, यूनियन के नेता रक्तदान करने लगे। दूसरों ने जब देख लिया कि खून देने से किसी किस्म का कोई नुकसान नहीं होता है बल्कि मरणासन्न मरीज की जान बच जाती है, तब उनमें रक्तदान के बारे में दिलचस्पी पैदा हो गयी। स्वेच्छा रक्तदान करने वाले अपना नाम दर्ज कराने लगे और यह संख्या पांच सौ के पार हो गयी।

किसी मरीज को खून की जरूरत होती तो पहले परिजनों, रिश्तेदारों से खून देने के लिए कहा जाता। उनमें से अगर सही रक्तदाता न मिले या ग्रुप मैचिंग न हो तो स्वेच्छा से रक्तदान करने वाले को बुला लिया जाता। अस्पताल या यूनियन के दफ्तर से सर्कुलर जारी हो जाता और एक डेढ़ घंटे में रक्तदाता हाजिर हो जाता। अस्पताल के डॉक्टर, कर्मचारी और यूनियन के नेता इमरजेंसी स्टाक की तर्ज पर मौजूद रहते।

इसी तरह एक ऐसे ब्लड बैंक तैयार हो गया, जहां सभी ग्रुपों के लिए पर्याप्त खून हमेशा उपलब्ध था। (मौजूदा जो कायदा कानून है, उसके तहत इस तरह ब्लड बैंक चलाना संभव नहीं है। किंतु मुझे मालूम है कि सारा कायदा कानून मानकर भी दल्ली राजहरा के मजदूर रक्तदान सेवा जारी रख सकते थे।)

राष्ट्रीय कार्यक्रमों में शहीद अस्पताल की हिस्सेदारी

राष्ट्रीय यक्ष्मा उन्मूलन कार्यक्रम और टीकाकरण कार्यक्रम में दुर्ग जिले में शहीद अस्पताल अव्वल नंबर पर था। बहरहाल 1990 के दशक की शुरुआत से ही नई आर्थिक नीतियों के झटके से टीबी की दवाओं और उसके टीके की सप्लाई अनियमित हो गयी।

1989 में स्थानीय प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र ने दल्ली राजहरा की मजदूर बस्तियों के पोलियो पीड़ितों का एक सर्वेक्षण किया। देखा गया कि 1984 के बाद कोई शिशु

पोलियो से पीड़ित नहीं हुआ। नहीं, सिर्फ शहीद अस्पताल को इसका श्रेय नहीं जाता है। 1977 से आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक आंदोलनों की निरंतरता की वजह से मजदूरों के रहन सहन के स्तर में सुधार, जन शिक्षा के प्रसार ही इस कृतित्व के असल हकदार हैं। शहीद अस्पताल ने राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में भाग नहीं लिया। क्योंकि सरकार की राजनीति- जनसंख्या ही सारी समस्याओं की जड़ है, वितरण में असमानता नहीं- के खिलाफ थे मजदूर।

स्वास्थ्य आंदोलन को वृहत्तर सामाजिक आंदोलन का हिस्सा बनाना है

दल्ली राजहरा के जिस स्वास्थ्य आंदोलन की बात कर रहा हूं, वह मेहनतकश जनता के अपने हक हकूक हासिल करने के एक बड़े आंदोलन का हिस्सा था। मजदूरों ने अपने अनुभव से सीखा कि ज्यादातर स्वास्थ्य समस्याओं की जड़ें आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों में होती हैं, लिहाजा मौजूदा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों में बदलाव किये बगैर मौजूदा स्वास्थ्य समस्याओं मे कोई मौलिक परिवर्तन नहीं होने वाला है। एक उदाहरण के जरिये इसे समझने की कोशिश करते हैं। गरीब मुल्कों में जानलेवा संक्रामक रोगों में पहले या दूसरे नंबर पर रहने वाला रोग डायरिया है। जिसके शिकार कुपोषित लोग और खासतौर पर कुपोषित बच्चे सबसे ज्यादा होते हैं। जहां तहां शौच और दूषित पेयजल से इस रोग का संक्रमण फैलता है। छोटे छोटे गंदी झुग्गी झोपड़ियों में जिनकी रिहाइश मजबूरी है, उनके लिए यह रोग महामारी में तब्दील हो जाता है। शरीर में नमक पानी घटते जाने से यह रोग प्राणघाती बन जाता है। अगर लोगों को नमक चीनी नींबू का शरबत बनाकर, नमक पानी रिसाव का मुकाबला करना आ जाये, तो डायरिया से होने वाली मौतों को बहुत कम किया जाना संभव है। जिन देशों में डायरिया पर नियंत्रण संभव हुआ है, उन देशों में सबके लिए पेयजल, शौचालय, सही आवास, भरपेट भोजन और शिक्षा के माध्यम से ही ऐसा संभव हो सका है।

किंतु स्वास्थ्य कार्यक्रम में सिर्फ दवाएं बांटकर डायरिया का इलाज किया जाता है। हालांकि कुछ कार्यक्रम बताते हैं कि पानी उबाल कर पीना चाहिए और इलाज के लिए नमक चीनी के शरबत का इस्तेमाल करें। उन्हें याद नहीं रहता कि जिनके पास पर्याप्त खाद्य के लिए पैसे नहीं होते, वे पानी उबालने के लिए ईंधन कहां से लायेंगे? इसतरह के प्रचार अभियान में पर्याप्त खाद्य के महत्व, आवास के महत्व के बारे में चर्चा ही नहीं होती तो पेयजल की मांग दब कर रह जाती है।

दल्ली राजहरा स्वास्थ्य कार्यक्रम के शुरुआती प्रचार अभियान में डायरिया को केंद्रीय विषय बनाया गया था। प्रचार अभियान में डायरिया के आर्थिक, सामाजिक कारणों, डायरिया के लिए दवाओं की जरूरत नहीं होने और शुद्ध पेयजल की

आवश्यकता पर खास जोर दिया जाता था। इसके बाद सचेत लोगों को लेकर छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने आंदोलन शुरू कर दिया। नतीजतन सरकार और बीएसपी मैनेजमेंट ने बाध्य होकर 1989 में दल्ली राजहरा और आस पास के गांवों में 179 में ट्यूब वेल लगा दिये।

जनस्वास्थ्य शिक्षा का माध्यम-शहीद अस्पताल

शहीद अस्पताल ने स्वास्थ्य शिक्षा की सभी पद्धतियों का प्रयोग किया। आउटडोर और इनडोर मरीजों और उनके परिजनों के साथ डॉक्टर और चिकित्साकर्मी रोग की वजह और उसके इलाज के बारे में विस्तार से चर्चा करते थे। छुट्टी के दिन मंगलवार को स्वास्थकर्मी और डॉक्टर टीम बनाकर गांवों और मजदूर बस्तियों में जाकर पोस्टर प्रदर्शनी, स्लाइड शो और जादू प्रदर्शनी के साथ प्रचार चला रहे थे। इसके अलावा अस्पताल से दीवाल पत्रिका, 'स्वास्थ्य संगवारी' (यानी स्वास्थ्य के साथी) निकाली जाती थी। 1989 से हर दो महीने के अंतराल में स्वास्थ्य की आम समस्याओं पर केंद्रित स्वास्थ्य पुस्तिका निकाली जाती थी। इस पुस्तक माला का नाम दिया गया 'लोक स्वास्थ्य शिक्षामाला'।

जनशिक्षा के तहत जिन विषयों को खास तरजीह दी जाती थी, वे इस प्रकार हैं:

- स्वास्थ्य संबंधी अंधविश्वासों और कुसंस्कारों का पर्दाफाश करना।
- चिकित्सा कारोबारियों की अवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति को उजागर करना।
- रोग प्रतिरोध और रोग चिकित्सा की सहज तकनीकी ज्ञान से आम जनता का सशक्तीकरण।
- देशी विदेशी दवा कंपनियों के शोषण के संबंध में जनता को सचेत करना।

स्वास्थ्य प्रचार अभियान के माध्यम से जनता को सामाजिक समस्या के बारे में सचेत करके किस तरह आंदोलन की जमीन पकायी जाती थी, डायरिया को लेकर पेयजल की मांग को सामने लाने के प्रसंग में वह बताता हूं। इसके अलावा छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा परिवार का कोई संगठन जब कोई आंदोलन चलाता था, तो उस आंदोलन

की वजह से बेरोजगार हो गये मजदूरों और किसानों के परिवार की संपूर्ण चिकित्सा की जिम्मेदारी शहीद अस्पताल उठाता था। भोपाल गैस पीड़ितों के स्वास्थ्य की मांग लेकर आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन में शहीद अस्पताल की सुनहली हिस्सेदारी थी।

पहले दल्ली राजहरा में कोई सरकारी अस्पताल नहीं था। बीएसपी अस्पताल में इंतजामात पर्याप्त नहीं थे। शहीद अस्पताल की क्रमशः बढ़ती लोकप्रियता से शंकित प्रशासन ने डोंडी लोहारा विधानसभा क्षेत्र में सात स्वास्थ्य केंद्र बना दिये। बीएसपी अस्पताल में भी बिस्तरों की संख्या में इजाफा हो गया।

संचालन में भी अभिनवत्व था

वर्ग विभाजित समाज में किसी भी संस्था के संचालन में वर्ग विभाजन का प्रतिबिंबन होता है। इसलिए किसी भी अस्पताल के संचालन में सबसे ऊपर प्रशासक या अधीक्षक का स्थान होता है। उनके नीचे सीढ़ी दर सीढ़ी बड़े डॉक्टर, छोटे डॉक्टर, नर्स, तीसरे दर्जे के कर्मचारी और चौथे दर्जे के कर्मचारी होते हैं। संघर्ष और निर्माण राजनीति को आकार देने के लिए वर्ग विभाजित शोषण आधारित समाज को वर्ग विहीन समाज के भ्रूण मॉडल के रूप में शहीद अस्पताल का विकास हुआ। इसलिए अस्पताल में प्रशासक या अधीक्षक जैसा कोई पद ही नहीं था।

मानसिक और शारीरिक श्रम में कोई फर्क नहीं किया जाता था। डॉक्टर, नर्स, चिकित्साकर्मी, श्रमिक, स्वास्थ्य सफाई कर्मी- सबको लेकर गठित एक कमिटी हफ्ते में तयशुदा किसी दिन में बैठक करके नीतिगत और कार्यकारी फैसले करती थी। चूंकि इस समिति में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सबके लिए बराबर थी- बहुमत के आधार पर फैसले होते थे। बेहद खास मुद्दे पर फैसले के वक्त, जिसका यूनियन या राजनैतिक संगठन पर असर होने के आसार होते, ऐसी बैठक में यूनियन के नुमांइदे भी भाग लेते थे।

सीमाबद्धता के बारे में

मूलतः मानव संसाधन के अभाव में मजदूरों के पेशागत रोगों को लेकर हम काम नहीं कर पा रहे थे। जबकि मजदूरों में पेशागत श्वास रोग, ट्रांसपोर्ट मजदूरों को कमर दर्द, गर्दन में दर्द को लेकर काम करने की बेहद जरूरत थी।

दूसरी बड़ी कमजोरी यह थी कि डॉक्टरों के लिए पश्चिम बंगाल पर निर्भरता थी। विनायक दा, आशीष दा, पवित्र दा, शैबाल दा, चंचला दी और इनके बाद मैं- मेरे बाद डॉ. प्रदीप दास, डॉ. भास्कर साहा- सारे के सारे पश्चिम बंगाल में समाज परिवर्तनकामी मेडिकल छात्र आंदोलन की फसल थे। यहां तक कि कामरेड नियोगी के निधन के

बाद अस्पताल में जब स्थायी डॉक्टर सिर्फ मैं और शैबाल दा रह गये, फिर हममें से कम से कम एक को संगठन के कामकाज भी देखने थे, तब भी हमारी अपील पर बाहर से आने वाले डॉक्टर सिर्फ पश्चिम बंगाल के ही थे, जो बारी बारी से दस पंद्रह दिन के लिए मदद के वास्ते चले आते थे। पहले गैरबंगाली डॉक्टर राजीव लोचन शर्मा भी छत्तीसगढ़ के नहीं थे। वे इंदौर के नर्मदा बचाओ आंदोलन से 1992 में शहीद अस्पताल आये। 1994 के बाद छत्तीसगढ़ के डॉक्टर आये और अब भी आ रहे हैं, लेकिन वे भी सरकारी नौकरी या पोस्ट ग्रेजुएट पढ़ाई से पहले के इंतजार के दौरान।

एक और समस्या थी- अस्पताल के सभी चिकित्सा कर्मी मजदूर किसान परिवारों से थे। नियुक्ति के वक्त मुक्ति मोर्चा के आंदोलन में उनकी दिलचस्पी पर भी विचार होता था। फिर भी इनमें से अनेक शहीद अस्पताल में अपने काम को दूसरी नौकरियों के नजरिये से देखते थे। स्वास्थ्य राजनीति, आम राजनीति लेकर चर्चा, देश के घटनाक्रम पर विचार विश्लेषण, उन्हें संगठन और आंदोलन के काम से जोड़ने, इत्यादि माध्यम से उनकी मानसिकता बदलने की कोशिशें की जाती रही हैं।

गंभीर समस्या यह थी कि शहीद अस्पताल के संचालन में मजदूर स्वास्थ्यकर्मी काफी हद तक मैनेजर की तरह काम करते थे। तब देखा गया कि जब वे मैनेजर की तरह काम कर रहे होते, तो उनका विचलन हो जाता। खदान में बीएसपी या ठेकेदार के मैनेजर जिस तरह मजदूरों से सलूक करते हैं, वे भी वैसा ही सलूक अस्पताल के दूसरे कार्यकर्ताओं के साथ करने लगते। इसलिए निरंतर विचारधारात्मक लड़ाई जारी रखनी पड़ी।

विपरीत यात्रा

नियोगी की 1991 में शहादत के बाद संगठन के नेतृत्व के एक प्रभावशाली अंश ने संगठन को वर्ग संघर्ष के रास्ते से हटाने की कोशिशें शुरू कर दीं। इस पर संगठन के बड़े हिस्से ने जब विरोध करना शुरू कर दिया तो उन्होंने संगठन की लोकतांत्रिक राजनीति को तिलांजलि दे दी। शहीद अस्पताल के डॉक्टर वहां सिर्फ नौकरी के मकसद से गये नहीं थे। वे छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के होल टाइमर भी थे। इसलिए ऐसे हालात में मैं और मेरे साथ कई और साथी वर्ग संघर्ष बनाम वर्ग समझौता, संगठन में लोकतंत्र बनाम तानाशाही की विचारधारात्मक लड़ाई में फंस गये। 1994 में मशीनीकरण के पक्ष में नेताओं के समझौते का विरोध करने की वजह से मुझे पहले निलंबित किया गया, फिर निष्कासित। मुझे अपना पक्ष रखने का कोई अवसर नहीं मिला। यह पहला मौका था, जब शहीद अस्पताल में ऐसा कोई फैसला हुआ, जो अस्पताल के डॉक्टरों और कर्मचारियों ने लोकतांत्रिक पद्धति के तहत नहीं लिया। इस घटना के विरोध में दो डॉक्टरों ने इस्तीफा दे दिये, बाकी रह गये दो। उसी वक्त से

पीछे की तरफ वापसी शुरू हो गयी। जो दो डॉक्टर रह गये, उनमें से वरिष्ठ जो थे, वे दो साल तक शहीद अस्पताल में नहीं रहे, उसी दौरान किसी और डॉक्टर ने अस्पताल की आय बढ़ाने के लिए केबिन चालू कर दिया, जबकि सबके लिए समान सेवा हमारा मंत्र रहा है।

कर्मचारियों और डॉक्टरों के भत्ते समान थे। कार्य दक्षता के बहाने इनमें से कुछ के भत्ते में इजाफा कर दिया गया। इस पर कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी। नये कुछ डॉक्टर भ्रष्टाचार में भी लिप्त हो गये। अस्पताल में मरीजों की तादाद बहुत भारी थी और तुलना में देखभाल के लिए लोग कम थे। नतीजतन रात में आपरेशन करके सुबह छुट्टी दी जाने लगी। अस्पताल की कमाई का कोई हिसाब किताब नहीं रहा। उन डॉक्टरों और उनके गिरोह में शामिल लोग पैसे का बंटवारा भी करने लगे।

शहीद अस्पताल से मेरा अलग होना दुख भरा रहा है, इसलिए अरसे से वहां नहीं गया। तेरह साल बाद जब डॉ. विनायक सेन जेल में कैद थे तो एक बैठक के सिलसिले में शहीद अस्पताल गया। तब लगा, नहीं जाता तो बेहतर होता। अस्पताल का आयतन बहुत बड़ा हो गया है, किंतु पीछे की तरफ चल रहा है-दवाओं का तर्कसंगत इस्तेमाल नहीं होता। 1994 के बाद स्वास्थ्य पुस्तिका सिर्फ एक निकली-सिकल सेल एनेमिया पर। श्रमिक कर्मचारी मैनेजरी कर रहे हैं, उनका आचरण मैनेजरों की तरह है। कर्मचारियों का एक तबका भ्रष्ट हो गया है। सबसे बुजुर्ग डॉक्टर का पद अब निर्देशक का है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना में भ्रष्टाचार के आरोप भी हैं। असल में राजनीति नियंत्रक की जगह (Politics in Command) न हो, तो ऐसा ही होना था। फिर भी शहीद अस्पताल जिंदा है

शहीद अस्पताल चेंगाइल बाउड़िया बाइनान श्रमिक कृषक मैत्री स्वास्थ्य केंद्रों में, बेलियातोड़ मदन मुखर्जी स्मृति स्वास्थ्य केंद्र में, जेम्सपुर सुंदरवन सीमांत स्वास्थ्य परी सेवा, सरबेड़िया सुंदरवन श्रमजीवी अस्पताल में जिंदा है। हम इन केंद्रों में शहीद अस्पताल के सबक को और विकसित कर रहे हैं। नई पीढ़ी के डॉक्टर भी आकर्षित हो रहे हैं। नये मूल्यबोध के चिकित्सक और स्वास्थ्यकर्मी तैयार हो रहे हैं।

शहीद अस्पताल को लेकर उम्मीदें अभी खत्म हुई नहीं हैं क्योंकि वहां अब भी हमारे सहकर्मी डॉ. शैबाल जाना, प्रधान सेविका अल्पना दे सरकार हैं।

काम के दबाव में विचारधारा के मुद्दों पर वे ध्यान दे नहीं पा रहे हैं, ऐसा हम मान रहे हैं। कुछ साल पहले छात्र आंदोलन, जूनियर डॉक्टर आंदोलन के हमारे नेता डॉ. दीपकंर सेनगुप्त ने वहां जाकर काम संभाला है। स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉ. शीला कुंडु भी वहां हैं। आदर्शों के प्रति प्रतिबद्ध लोग मिलकर फिर आदर्शों के पथ पर शहीद अस्पताल को लौटा लायेंगे, बस, अब यही उम्मीद है।

दल्ली राजहरा का मशीनीकरण विरोधी आंदोलन

जिन खास आंदोलनों की वजह से दल्ली राजहरा मजदूर आंदोलनों की राजधानी दिल्ली बन गया था, उनमें अन्यतम मशीनीकरण विरोधी आंदोलन है। इस तेज आंदोलन के आखिरी चरण के दौरान मैं वहीं मौजूद रहा हूं। हर हफ्ते मतप्रकाश पत्रिका के लिए रपट लिखी है। बड़ा आलेख अनीक के लिए लिखा है। अनस्टुप के 'संघर्ष ओ निर्माण' संकलन और 'अभिमुख' पत्रिका के शंकर गुहा नियोगी स्मृति विशेषांक में मशीनीकरण विरोधी आंदोलन पर दोनों आलेख मेरे हैं। फिर 1994 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नियोगी परवर्ती नेतृत्व ने जब आंदोलन के साथ विश्वासघात करके दल्ली खदान को संपूर्ण मशीनीकरण के लिए भिलाई इस्पात परियोजना के हवाले कर दिया, तब उस फैसले का विरोध करने पर दूसरे कई साथियों के साथ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा से मैं बहिष्कृत भी हो गया। पुराने आलेखों से मदद लेने के बावजूद यह मेरा नया आलेख है।

यह तब की कहानी है, जब छत्तीसगढ़ मध्यप्रदेश का हिस्सा था। दक्षिण पूर्व के सात आदिवासीबहुल जिलों- दुर्ग, राजनांदगांव, रायपुर, बस्तर, विलासपुर, रायगढ़ और सरगुजा को लेकर छत्तीसगढ़ बना है। प्राकृतिक संपदा से भरपूर छत्तीसगढ़- लोहा, कोयला, चूना पत्थर, डोलोमाइट, कोयार्जाइट, तांबा, यूरेनियम, टीन, बक्साइट, फेल्डस्पार, मैगनीज खदानों का छत्तीसगढ़। इसके अलावा खेती के लिए विशाल उपजाऊ मैदान भी है। नदियों में साल भर पानी बहता रहता है और नदियों के अलावा पहाड़ी झरनों से उत्पन्न बड़े बड़े जलाशय भी हैं। जंगलों में शाल, सैगुन, तेंदु, महुआ, बांस जैसे वन संपदा हैं। इन्हीं प्राकृतिक संपदा की नींव पर छत्तीसगढ में बड़े बड़े उद्योग लगे हैं। शुरुआत में इनमें अनेक सार्वजनिक सेक्टर के उद्योग कल कारखाने थे। प्राकृतिक संपदा के अलावा छत्तीसगढ़ के औद्योगीकरण में बड़ी भूमिका सस्ती श्रम शक्ति की रही है।

दुर्ग जिले में रूस की मदद से 1958 में भिलाई इस्पात कारखाना का निर्माण हुआ। इस कारखाने के लिए लौह अयस्क दुर्ग जिले की ही दल्ली राजहरा, महामाया

और आरिडुंगरी खदानों में उपलब्ध थे। कोयार्जाइट की आपूर्ति जिले की दानीटोला खदान से होती थी। लाइम स्टोन और डोलोमाइट दुर्ग जिले की नंदिनी और विलासपुर जिले की हीररी खदानों से लाये जाते थे। इस कारखाने को तंदुला, गोंदली, बईडिही, खरखरा, गंगरेल, इत्यादि जलाशयों से पानी की आपूर्ति होती थी। नतीजतन दुर्ग में खेती के लिए सिंचाई का पानी नहीं मिल पाता था। लोहा पत्थर ढुलाई के लिए दल्ली राजहरा से भिलाई तक रेल लाइन बनायी गयी, जिसमें हजारों एकड़ कृषि जमीन और वन भूमि खप गयी। कारखाना और खदानों के कचरे से हवा पानी और मिट्टी प्रदूषित हो रही थी। दुर्ग जिले में प्राकृतिक संतुलन गड़बड़ा गया। साल दर साल दुर्ग सूखाग्रस्त इलाका घोषित होता रहा।

छत्तीसगढ़ से इतना सबकुछ रहने के बावजूद भिलाई ने लौटाया कुछ भी नहीं। भिलाई इस्पात कारखाना की कर्मचारी वाहिनी में सिर्फ निचले स्तर का एक हिस्सा ही छत्तीसगढ़ी रहा है। ये छत्तीसगढ़ी लोग खदानों में पत्थर तोड़ रहे थे, ट्रकों में पत्थर लोड कर रहे थे। उत्पादन बढ़ाने के बहाने मशीनीकरण के जरिये इन्हीं लोगों की छंटनी की कोशिशों को अपने प्रतिरोध से कैसे नाकाम कर दिया था दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों ने, वही कहानी सुनानी है।

दल्ली राजहरा

दल्ली और राजहरा दो पहाड़ों के नाम हैं। लोहा पत्थरों के पहाड़। दल्ली पहाड़ में तीन खदानें हैंः दल्ली, मयूरपानी और झरन दल्ली। राजहरा में दोः राजहरा और कोकान। दल्ली राजहरा खदानसमूह या Dalli Rajhara Group of Mines में इन पांच खदानों के अलावा और दो खदानें 18 किमी दूर महामाया खदान और 20 किमी दूर आरिडुंगरी खदानें भी शामिल हैं। दल्ली राजहरा की इन सभी खदानों की मिल्कियत भिलाई इस्पात कारखाने की है।

इन पांचों खदानों को केंद्रित पचास के दशक के आखिर में दल्ली राजहरा खदान शहर बस गया। मैं जिस वक्त छत्तीसगढ़ में था (1986-1994), उस वक्त दल्ली राजहरा की जनसंख्या एक लाख बीस हजार की थी। दल्ली राजहरा पर निर्भर रहकर डोंडी लोहारा ब्लॉक के करीब एक लाख और लोग गुजर बसर करते थे, जो दल्ली राजहरा के वाशिंदों को लकड़ी, सब्जी, अनाज, दूध, वगैरह की आपूर्ति करते थे। वे इनके राशन पानी के लिए खेती में जुटे हुए लोग थे।

दल्ली राजहरा लोहा खदान के ठेका मजदूरों की 3 मार्च, 1977 को आजाद यूनियन या छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ (सीएमएसएस) बन गयी। इस यूनियन की नये आंदोलनों में खास मशीनीकरण विरोधी आंदोलन। इस आंदोलन को समझने के लिए मैनुअल खदान और मशीनीकृत खदान के काम के तौर तरीकों को समझना

जरूरी है।

मैनुअल खदान में काम करने के तौर तरीके

1. सबसे पहले प्रसपेक्टिंग यानी मिट्टी या पत्थर की खुदाई करके कहां अच्छे अयस्क हैं, यह पता लगाना।
2. इसके बाद क्वालिटी ब्लाकिंग, जिससे खनन के लिए सही जगह चिन्हित कर ली जा सके।
3. ब्लॉक प्रिपरेशनः अर्थात अयस्क पर मिट्टी और पत्थरों की परतें हटाना, आवाजाही के रास्ते बनाना।
4. ड्रिलिंगःयानी अयस्क में छेद करना, जिसमें डायनामाइट रखकर धमाके किये जा सके।
5. ब्लास्टिंगः डायनामाइट विस्फोट के जरिये अयस्क के बड़े बड़े हिस्से अलग कर देना।
6. रेजिंग-अयस्क के बड़े बड़े हिस्से को शब्बल और बड़े बड़े हथौड़ों से पुरुष श्रमिकों द्वारा तोड़ना। इन टूटे टुकड़ों को फिर छोटे हथौड़ों से तोड़कर और छोटा बनाने का काम मूलतः महिला रेजिंग मजदूरों का काम है। इसके बाद 0 से 10 मिमी और 10 से 80 मिमी आकार के हिस्सों में अयस्क को बांटकर रखना।
7. ट्रांसपोर्टिंगः ट्रांसपोर्ट मजदूर टोकरियों में भरकर यह अयस्क टिपर ट्रकों में लाद देते हैं और ड्राइवर उन ट्रकों को मंजिल तक पहुंचाते हैं।

मैनुअल पद्धति में जो यंत्र चाहिएः प्रस्पेक्टिंग के लिए बोर (यानी खुदाई करने का यंत्र)। छोटी ड्रिलिंग मशीन, शब्बल, हथौड़ा, गैती, कुदाल, वगैरह।

मैकानाइज्ड खदान में कार्यपद्धति

1. ब्लाक प्रिपरेशन बुलडोजर से होता है।
2. आम ड्रिलिंग के बदले हैवी ड्रिलिंग का रास्ता अपनाया जाता है।
3. आम ब्लास्टिंग के बदले हेवी ब्लास्टिंग की जाती है।
4. अयस्क के बड़े टुकड़ों को इस मामले में खदान में ही तोड़कर छोटा नहीं बनाया जाता। इन बड़े टुकड़ों को शावेल के जरिये डंपर में लाद दिया जाता है। कई टिपर ट्रकों का काम इकलौते डंपर से लिया जा सकता है। जिन बड़े पत्थरों का बोझ टिपर ट्रक ढो नहीं सकते, उसे अनायास ही डंपर ढोता है। पत्थर तोड़कर छोटा बनाने का काम प्लांट में होता है। क्रशर एक हजार मिली मीटर तक के पत्थर के टुकड़ों को तोड़कर छोटा बना देता है। इससे भी छोटा बनाने के काम के लिए कोन क्रशर का इस्तेमाल होता है। इस

तरह हम देखते हैं कि मैकानाइज्ड पद्धति के तहत रेजिंग मजदूरों का काम बुलडोजर, शावेल, क्रशर, कोन क्रशर करते हैं। ट्रांसपोर्ट मजदूर का काम भी शावेल से कराया जाता है।

दल्ली राजहरा के खदानों में राजहरा खदान पहले से मैकानाइज्ड थी। कोकान, दल्ली, झरन दल्ली, मयूरपानी, महामाया और अरिडुंगरी में मैनुअल पद्धति से खनन होता था। बाद में अरिडुंगरी खदान को भी मैकानाइज्ड कर दिया गया, जिसका एआईटीयूसी नियंत्रित श्रमिक संगठन प्रतिरोध नहीं कर सका। इसके बाद भिलाई इस्पात परियोजना के मैनेजरों की नजर दल्ली पर टिक गयी। पिछली सदी के आठवें दशक के अंत के आंकड़ों के हिसाब किताब के मुताबिक उस वक्त दल्ली राजहरा के खदानों में लौह अयस्क का भंडार मोटे तौर पर इस तरह थाः

खदान	**भंडार (मिलियन टन में)**
राजहरा	35 मिलियन टन
कोकान	3 मिलियन टन
दल्ली और मयूरपानी	170 मिलियन टन
झरन दल्ली	35 मिलियन टन
महामाया	मिलियन टन
अरिडुंगरी	18 मिलियन टन

मशीनीकरण के लिए जिस मात्रा में पूंजी का निवेश करना होता है, उस तुलना में कोकान या महामाया में अयस्क भंडार कम होने की वजह से मैनेजमेंट ने कभी उन दोनों खदानों को पूरी तरह मैकेनाइज्ड बनाने के बारे में नहीं सोचा। दूसरी तरफ, दल्ली खदान का लौह अयस्क भंडार विशाल था और यही नहीं, दल्ली, मयूरपानी और झरन दल्ली खदानें एक ही पहाड़ में थीं- इसलिए किसी एक को मैकानाइज्ड कर देने के बाद बाकी दो खदानों को मैकानाइज्ड करना भी आसान था।

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ बनने से पहले ही यानी 1977 से पहले दल्ली खदान के मशीनीकरण का काम शुरू हो गया था। कोन क्रशर लग चुके थे, जिनसे पत्थर तोड़ा जाता है। प्लांट भी लगा दिया गया- ताकि स्क्रीनिंग (छेंकना), सर्टिंग (छंटनी) और वाशिंग (धुलाई) के जरिये अयस्क की गुणवत्ता बढ़ाकर उसे इस्पात कारखाने में इस्तेमाल लायक बनाया जा सके।

1978 में इस्पात परियोजना प्रबंधन ने बाकी काम पूरा करने की कोशिशें शुरू कर दींः खदान इलाके में आवाजाही के लिए चौड़ी सड़क बनाना, जिसपर शावेल, डंपर आ जा सकें, हेवी ड्रिलिंग के लिए जरूरी मशीनों का सोवियत संघ से आयात, शावेल और डंपरों की खरीद, क्रशर लगाना।

ऐसे वक्त बस्तर के बाइलाडिला खदान में एक घटना हो गयी। वहां लोहा खदान के मशीनीकरण के चलते कई हजार मजदूरों की छंटनी हो गयी। वहां मजदूर यूनियन एआईटीयूसी की थी। केंद्रीय नेतृत्व निष्क्रिय थी, लेकिन स्थानीय नेता मशीनीकरण

के खिलाफ मजदूरों को संगठित करने का प्रयास कर रहे थे। किंतु पुलिस की गोली और ठेकेदारों की गुंडा वाहिनी के हमलों के मुकाबले मजदूरों ने हार मान ली। बाइलाडिला की घटना से दल्ली राजहरा के मजदूरों ने सबक सीखा। तब शंकर गुहा नियोगी ने लिखा-'किरंदुल के अग्निगर्भ से'।

आंदोलन के जरिये मशीनीकरण के प्रतिरोध के साथ साथ तथ्यों के साथ मशीनकरण के खिलाफ दलीलें भी तैयार कर ली गयीं। नीचे की यह सारिणी तब के पंफलेट से है:

सारिणी एक

(टन प्रति उत्पादन लागत, रुपये में, 1978-79)

	मैनुअल खदान	मैकानाइज्ड खदान
रेजिंग खर्च	18.50	39.75
ट्रांसपोर्ट खर्च	22.42	66.99
दूसरे खर्च	5.09	0.57
कर	4.00	4.00
कुल	50.01	111.31

स्रोतःभारत सरकार का इस्पात व खनिज मंत्रालय

सारिणी दो

(ड्रिलिंग-ब्लास्टिंग में खर्च की तुलना, रुपये में)

चालू पद्धति			प्रस्तावित पद्धति
हैमर ड्रिलिंग	4.30 प्रति मीटर	हैवी ड्रिलिंग	110.00 प्रति मीटर
ब्लास्टिंग	1.50 प्रति मीटर	हैवी ब्लास्टिंग	3.70 प्रति मीटर

स्रोतःछत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का सर्वे

सारिणी तीन

(शावेल पर सालाना खर्च, रुपये में)	
विनियोग ब्याज	4,50, 000
डिप्रिसिएशन	4,50,000
रिप्लेसमेंट, डेवेलपमेंट	2,00,000
पावर शावेल का बिजली खर्च	1,08,000
लुब्रिकेशन	28,000

शावेल के साथ जुते अफसर, मजदूर पर खर्च	4,00,000
कुल	16, 36, 000

स्रोतः छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का सर्वे

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने हिसाब जोड़कर दिखा दिया- दल्ली मैकानाइजेशन के लिए पांच शावेल लगाने की बात थी तो इसके लिए कुल वार्षिक खर्च 81, 80, 000 रुपये का होता। इस धनराशि से दस हजार नये मजदूरों को काम पर लगाया जा सकता था, जबकि मशीनें लगाने पर साढ़े सात हजार मजदूर बेरोजगार हो जाते।

मशीनीकरण का दुस्प्रभाव

मशीनीकरण होने पर रेजिंग और ट्रांसपोर्ट मजदूर के लिए कोई काम नहीं बचेगा, उनके परिजन दाने दाने को मोहताज हो जायेंगे, खदान मजदूरों के रोजगार पर निर्भर दल्ली राजहरा में दुकान बाजार बंद हो जाएंगे, आसपास के गांवों के लोग जो बाजार में तरह तरह के सामान बेचते हैं, उनकी आजीविका खत्म होगी, खान मजदूरों की आय के एक हिस्से से उनके परिजन गांवों में जो खेती बाड़ी करते हैं, वह सिलसिला बंद हो जायेगा, ट्रकों की जगह डंपर के ले लेने पर बड़ी संख्या में ट्रक मालिक, ड्राइवर, हेल्पर, गैराज मालिक, गैराज मजदूर बेरोजगार हो जायेंगे। इलाके की अर्थव्यवस्था और जन जीवन के संकट के बारे में व्यापक प्रचार अभियान के जरिये छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ और उसके मशीनीकरण विरोधी आंदोलन को भारी जन समर्थन मिलने में कामयाबी हासिल हो गयी।

देशद्रोह का पर्याय है मशीनीकरण

मशीनीकरण हुआ तो एक तरफ देश में बेरोजगारों की तादाद में इजाफा होगा तो दूसरी तरफ आर्थिक व तकनीकी क्षेत्र में विदेश पर निर्भरता भी बढ़ेगी- छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने अपने प्रचार अभियान में इस मुद्दे पर खास जोर दिया।

मशीनीकरण के लिए सोवियत संघ से कर्ज लेना था, मशीनों और अतिरिक्त कल पुर्जों का आयात भी उसी देश से होना था, तकनीकी ज्ञान भी वहीं से आना था। देश हित, जनहित, देश की आत्मनिर्भरता तिलाजंलि देनी होगी, इसके बदले में कुछ नेताओं और अफसरान के विदेशी बैंकों के खातों में जमा बढ़ना था।

वैकल्पिक अर्ध मशीनीकरण प्रस्ताव

जिस वक्त दल्ली राजहरा में मशीनीकरण विरोधी आंदोलन शुरू हुआ, तब केंद्र में जनता पार्टी की सरकार थी। बीजू पटनायक इस्पात मंत्री थे। शंकर गुहा नियोगी के

साथ उन्होंने बातचीत की और उन्होंने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की दलीलें भी सुन लीं। सुनकर वे बोले- कोन क्रशर और स्क्रीनिंग, सर्टिंग, वाशिंग प्लांट लगाने में जो चालीस करोड़ रुपये का निवेश हो गया, उसे नष्ट नहीं किया जा सकता। उन्होंने सुझाव दिया कि छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ कोई वैकल्पिक प्रस्ताव रखे, जिससे मजदूरों की छंटनी न हो और निवेश भी बेकार न जाये।

इस्पात मंत्री की इस चुनौती के मुकाबले छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का वैकल्पिक अर्ध मशीनीकरण प्रस्ताव तैयार किया गया। हेवी ड्रिलिंग, हैवी ब्लास्टिंग, शावेल, डंपर और ज क्रशर, इत्यादि मशीनें लगाने के बजाय चालू पद्धति यानी सामान्य ड्रिलिंग, ब्लास्टिंग, रेजिंग और ट्रांसपोर्ट मजदूरों को बहाल रखकर टिपर ट्रकों को चालू रखने को कहा गया। जिससे मजदूरों की छंटनी नहीं होनी थी और उत्पादन लागत भी कम रहनी थी।

जो मशीनें खरीद ली गयी हैं, उनका राजहरा मैकनाइज्ड खदान में इस्तेमाल का सुझाव दिया गया, क्योंकि वहां लगी मशीनें बेहद पुरानी हो गयी थीं।

जो कोन क्रशर और स्क्रीनिंग, सर्टिंग, वाशिंग मशीनें लग चुकी थीं, उन्हें चालू करने के लिए कहा गया क्योंकि इससे अयस्कों की गुणवत्ता में वृद्धि होनी थी। इसके अलावा लोहा पत्थर को बहुत ज्यादा छोटा करने के काम से निजात मिलने पर रेजिंग मजदूर ज्यादा उत्पादन कर सकते थे। बहुत ज्यादा छोटा करने का काम कोन क्रशर से लेना था।

20 अप्रैल, 1979 को छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के साथ भिलाई इस्पात कारखाना मैनेजमेंट ने एक करारनामे पर दस्तखत कर दिया और परीक्षण बतौर दल्ली खदान में सेमी मैकानाइज्ड पद्धति से खनन के लिए हरी झंडी मिल गयी।

हालांकि मैनेजमेंट ने संपूर्ण मशीनीकरण की परिकल्पना खारिज नहीं की समझौते के मुताबिक दो साल बाद इस परीक्षण के नतीजे की समीक्षा नहीं हुई। बल्कि दल्ली खदान में 1989 तक सेमी मैकानाइज्ड पद्धति से काम चालू रहा। किंतु इन दस सालों के दरम्यान मैनेजमेंट ने बार बार मजदूरों के प्रतिरोध को तोड़ने की कोशिशें जारी रखीं। मैनुअल खदानों में मजदूरों की संख्या घटाने की कोशिशें हुईं, ताकि मैनुअल खदान में उत्पादन घट जाये और उत्पादन बढ़ाने के बहाने मशीनीकरण के एजंडे को अंजाम दे दिया जाये।

1. सेवानिवृत्ति, मृत्यु, इत्यादि कारणों से रिक्त हुए श्रमिकों के पदों पर नई भर्ती रोक दी गयी।
2. दल्ली रेलवे साइडिंग पर वैगन में अयस्क लादने का काम लगभग एक हजार महिला श्रमिकों के जिम्मे था। उन सभी को डिपार्टमेंटल यानी स्थायी बनाकर अन्यत्र स्थानांतरित कर दिया गया। फिर वैगन में छोटे शावेल से

अयस्क लादने का काम चालू हो गया। ये महिला श्रमिक एआईटीयूसी के अंतर्गत एसकेएमएस यूनियन की सदस्य थीं। जबकि एसकेएमएस को शावेल के इस्तेमाल पर ऐतराज नहीं था। फिर डिपार्टमेंटल बनीं महिला मजदूरों का दूसरे खदानों में तबादला कर दिया गया। इनमें से ज्यादातर के पति दल्ली राजहरा में काम कर रहे थे। परिवार को बनाये रखने की मजबूरी में वे स्वेच्छा से सेवानिवृत्ति का विकल्प चुनने लगीं।

3. दल्ली राजहरा में ज्यादातर मजदूर अपढ़ थे। उनकी निरक्षरता को मौका बनाकर 40 से 58 साल के करीब पांच सौ मजदूरों को रिटायर होने के लिए मजबूर कर दिया गया।
4. कोकान खदान में अयस्क भंडार खत्म है, इस झूठ के सहारे खदान बंद करके छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्य 1200 मजदूरों का तबादला महामाया खदान में कर देने की कोशिश हुई, ताकि यूनियन को कमजोर बनाया जा सके। लंबी लड़ाई जारी रखकर आखिरकार मजदूरों ने मैनेजमेंट को फिर वह खदान 1987 में चालू करने के लिए मजबूर कर दिया।
5. जिन खदान इलाकों में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का असर कम था, उन सभी जगह ट्रांसपोर्ट मजदूरों की या तो छंटनी कर दी गयी या उन्हें डिपार्टमेंटल बनाने के बहाने उनका तबादला अन्यत्र किया जाने लगा। उनका काम शावेल से लिया जाने लगा।
6. दल्ली और झरन दल्ली में कुछ ठेकेदार और मजदूरों की सहकारी समितियां ठेके पर रेजिंग और ट्रांसपोर्ट का काम करती थीं। उनके ठेके का नवीनीकरण न करके मजदूरों को बेरोजगार कर देने की कोशिशें हुईं, लेकिन मजदूरों ने उन कोशिशों को नाकाम कर दिया।
7. जो मजदूर लंबे अरसे से काम पर लगे हुए थे, उन्हें आकर्षक रकम के साथ वोलुंटरी रिटायरमेंट के लिए ललचाया गया। मैनेजमेंट के खास निशाने पर छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ था, किंतु यूनियन ने अपने मजदूरों की संख्या लगभग अटूट रखने में कामयाबी हासिल कर ली। बहरहाल एआईटीयूसी की सदस्य संख्या पर असर हुआ क्योंकि उस यूनियन के दलाल नेता इस काम में मैनेजमेंट की मदद करते रहे।

मैनेजमेंट का नया हमला

दिसंबर, 1988 को भिलाई इस्पात कारखाना ने भिलाई के एक बड़े ठेकेदार को दल्ली मैकेनाइजेशन स्टेज टु के लिए 16 करोड़ रुपये का ठेका दे दिया। पहले चरण में ज क्रशर, स्क्रीनिंग-सर्टिंग-वाशिंग प्लांट लगने थे।

अब की दफा मशीनीकरण के लिए उनकी दलीलें इस प्रकार थीं:

- उत्पादन बढ़ाने के लिए मशीनीकरण जरूरी है। 1995 में वार्षिक पचास लाख टन इस्पात उत्पादन के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए मौजूदा मात्रा में अयस्क उत्पादन से काम नहीं चलने वाला है।
- इस्पात कारखाने के नये ब्लास्ट फारनेस के लिए और अधिक गुणवत्ता के अयस्क चाहिए जो मौजूदा मैनुअल पद्धति से मिलना असंभव है।
- मशीनीकरण की वजह से कर्मचारियों की छंटनी की यूनियन की आशंका निराधार है।
- छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की जबावी दलीलें इस प्रकार थीं:
- दल्ली राजहरा में उत्पादन लागत ज्यादा नहीं है और अयस्क की गुणवत्ता भी बेहतर है।

खदान का नाम	कहां जाता है?	प्रति टन उत्पादन लागत	गुणवत्ता(Fe%) की संख्या	मजदूरों
दल्ली राजहरा	भिलाई स्टील प्लांट		104 रुपये	63.08 से 65.76	12, 000
बरसुरा राउरकेला,	दुर्गापुर, बोकारो	98 रुपये 60.09 से 62.05 1, 900		

बोलानी दुर्गापुर स्टील प्लांट 103 रुपये 61, 42 से 62.57 1, 700
किरिबुरु बोकारो स्टील प्लांट 93 रुपये 62.83 से 63.62 1, 650
मेगातीबुरु बोकारो स्टील प्लांट 117 रुपये 61.33 से 62.37 2, 000
गुवा दुर्गापुर स्टील प्लांट 90 रुपये 60.36 से 60.44 आंकड़ा अनुपलब्ध
बाइलाडिला जापान 125 रुपये अयस्क में एलुमिना ज्यादा 3, 400
स्रोतः स्टील आथोरिटी आफ इंडिया, 1987-88

दल्ली राजहरा खदान समूह में मैनुअल खनिज उत्पादन की लागत भारतभर में सबसे कम

खदान का नाम	किस इस्पात कारखाने में जाता है	टन प्रति उत्पादन लागत
मनोहरपुर	IISCO	128.27 रुपये
बोलानी	दुर्गापुर	148.66 रुपये
कालता	राउरकेला	132.97 रुपये

झरनदल्ली भिलाई 89.23 रुपये

स्रोतः स्टील आथोरिटी आफ इंडिया (1987-88)

- 1995 में 50 लाख टन के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए सिर्फ 540 मजदूर चाहिए।

दल्ली राजहरा से जिस गुणवत्ता का अयस्क मिलता है, उसके 1.6 टन से 1 टन इस्पात तैयार होता है। अर्थात 50 लाख टन इस्पात के लिए 50 X 1.6 = 80 लाख टन अयस्क की आवश्यकता थी।

1989 में दल्ली राजहरा खदान समूह में वार्षिक लौह अयस्क उत्पादन इस प्रकार थाः

राजहरा मैकानाइज्ड खदान	28 लाख टन
दल्ली व मयूरपानी	28 लाख टन
झरनदल्ली	6 लाख टन
महामाया, अरि डुंगरी और कोकन	10 लाख टन
कुल	72 लाख टन

अर्थात अतिरिक्त आठ लाख टन अयस्क की और जरूरत थी।

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने हिसाब जोड़कर दिखा दिया कि सिर्फ नये 540 मजदूर और भर्ती करने से ही अतिरिक्त आठ लाख टन उत्पादन संभव है। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने हिसाब जोड़कर दिखाया कि ज क्रशर लगने से रेजिंग मजदूरों के लिए कोई काम नहीं बचेगा। चूंकि ज क्रशर के लिए उपयोगी माल सामान्य ट्रकों से ढोया नहीं जा सकता, इसलिए ट्रांसपोर्ट मजदूर भी अपना काम खो देंगे। इस तरह कुल दस हजार मजदूर बेकार हो जायेंगे, जिनमें 7, 500 छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्य थे और बाकी आईएनटीयूसी के।

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने हिसाब जोड़कर दिखाया कि मशीनीकरण संपूर्ण हो जाने पर दल्ली राजहरा की एक लाख बीस हजार की आबादी उजड़ जायेगी, वहां सिर्फ बीस हजार लोग बचे रहेंगे। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने मांग की कि अगर मशीनें लगानी ही हैं तो बेकार हो जाने वाले दस हजार मजदूरों को काम की सुरक्षा मिलनी चाहिए-

ठेकेदारी और कोआपरेटिव सोसाइटी के अंतर्गत काम कर रहे सभी मजदूरों का इजज्त के साथ विभागीकरण कर दिया जाय ताकि विभागीकरण के बाद भी वे जरूरी उत्पादन से जुड़े रहे और मैनेजमेंट अपनी मर्जी के माफिक उनकी छंटनी न कर सके। बिना किसी देरी के ग्रेच्युटी का भुगतान कर दिया जाये। जब तक मजदूरों का विभागीकरण नहीं हो जाता, उन्हें कैजुअल लिव और फेस्टिवल लिव दी जाये।

1989 में मजदूरों ने कैसे लड़ी लड़ाई?

खदान में मशीनें लगाने का ठेका भिलाई की बीके कंपनी को मिली थी। पहले उन्होंने

मिट्टी खोदने के लिए 97 मजदूरों को काम पर लगाया। जनवरी के पहले हफ्ते में उन्होंने दल्ली खदान में मशीनें ले जाने की कोशिश की। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के मजदूर लगातार दिन ब दिन मशीनों के लिए रास्ता अवरुद्ध करते रहे।

फरवरी में मशीन लगाने के विरोध में विधायक जनक लाल ठाकुर के आह्वान पर नागरिक सभा हुई। दल्ली खदान में क्रशिंग प्लांट लगना अनिश्चित हो गया तो भिलाई स्टील प्लांट मैनेजमंट ने चार छोटे क्रशर चलाने का ठेका एचएससीएल को दे दिया। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का हौसला पस्त करने के मकसद से पहले क्रशर का सब कंट्राक्ट एआईटीयूसी के अंतर्गत एक फर्जी सहकारिता समिति को दे दिया गया। नौकरी दिलाने के नाम पर एआईटीयूसी के नेता ग्रामीण बेरोजगार युवकों से रुपये वसूलने लगे। दूसरे क्रशर का ठेका एक स्थानीय ठेकेदार को दिया गया और इस मामले में भी एआईटीयूसी के मार्फत मजदूरों की भर्ती हुई।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के 'नौजवान संगठन' ने आंदोलन चला कर तीसरे क्रशर का ठेका छीन लिया और वहां 120 मजदूरों की भर्ती हो गयी। दूसरी तरफ, दूसरे क्रशर के मजदूरों ने न्यूनतम मजदूरी और आठ घंटे काम की मांगों को लेकर एआईटीयूसी से निकल कर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संगठन में शामिल होकर आंदोलन शुरू कर दिया। हालात काबू से बाहर होते रहे। एचएससीएल ने फिर चौथा क्रशर चालू नहीं किया। हताश होकर एआईयूटीसी ने हिंसा का रास्ता अपना लिया और छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों पर हमले होते रहे।

बीके कंपनी ने प्रारंभिक काम के लिए जिन 97 मजदूरों को भर्ती किया था, उन्हें आठ रुपये मजदूरी में दी जाती थी। न्यूनतम 17 रुपये 18 पैसे दैनिक मजदूरी की मांग पर उन्होंने हड़ताल कर दी। शुरुआत में ही छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों ने मशीनों का रास्ता रोक दिया था, अब की दफा मशीन ले जाने वाली गाड़ियों का रास्ता भी इन 97 मजदूरों ने रोकना शुरू कर दिया।

संकट में फंसी बीके कंपनी ने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ और शंकर गुहानियोगी के खिलाफ मुकदमा दर्ज कराया ताकि वे गाड़ी रोक न सकें। मार्च महीने के मध्य एचएससीएल के तीनों क्रशर का काम बंद कर दिया गया, जहां छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्य ही संख्या में ज्यादा थे।

इसपर एआईटीयूसी ने बाकायदा जुलूस लेकर छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों की बस्तियों पर धावा बोला और गाली गलौज करके उन्हें उकसाया ताकि वे मारपीट शुरू कर दें- अमन चैन बहाल रखने के नाम धारा 144 लागू थी- मकसद था कि मशीनीकरणविरोधी आंदोलन का दमन कर दिया जाये। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों ने शांत रहकर उनके मंसूबे पर पानी फेर दिया।

फिर खदान प्रबंधन ने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ से जुड़ी एक सहकारिता

समिति को इलाका छोड़ देने का नोटिस जारी कर दिया क्योंकि वे शावेल से खनन चलाना चाहते थे। इसके खिलाफ छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने हड़ताल कर दी।

बीके कंपनी के मुकदमे में दुर्ग सिविल कोर्ट ने फैसला सुनाया कि नियोगी समेत छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के तीन नेता गाड़ियों का रास्ता रोक नहीं सकते। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने कोर्ट के आदेश की परवाह न करके अवरोध जारी रखा।

पहली अप्रैल को छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने स्लो डाउन शुरू कर दिया तो भिलाई कारखाना चालू रखने के लिए प्रबंधन बाइलाडिला से प्रति टन चार सौ रुपये की दर से लौह अयस्क लाने को मजबूर हो गया। 6 अप्रैल को मशीनीकरण के खिलाफ दल्ली राजहरा में पूरी हड़ताल रही। दूसरी तरफ एआईटीयूसी का जन समर्थन खिसकता रहा।

मई महीने की शुरुआत से दहशत का रास्ता अख्तियार कर लिया एआईटीयूसी ने। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के विधायक की जीप पर हमला कर दिया। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों से मारपीट की। जबावी प्रतिरोध खड़ा कर दिया छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने। किसी आम मजदूर के बजाय छांट छांटकर एआईटीयूसी के नेताओं की धुलाई होने लगी तो दहशत का कारोबार सिरे से बंद हो गया।

6 मई को कोर्ट ने प्रशासन को आदेश जारी कर दिया कि जैसे भी हो, बीके कंपनी के मजदूरों को काम की जगह पहुंचने देने का इंतजाम करना होगा। वक्त की नजाकत भी समझना होगा। 1989 का विधानसभा चुनाव और दुर्ग मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री मोती लाल वोरा का गृह जिला। प्रशासन को मालूम था कि बिना गोली चलाये छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का प्रतिरोध तोड़ना नामुमकिन था और उस वक्त ऐसी कार्रवाई वांछनीय नहीं थी।

लिहाजा पुलिस प्रशासन ने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नेताओं से दरख्वास्त किया कि कम से कम अदालत के सम्मान की खातिर एआईटीयूसी के सदस्यों को काम की जगह तक जाने दें। एआईटीयूसी के 800 में से सिर्फ 170 मजदूर बहुत हिम्मत करके अर्ध सैनिक बल के जवानों के पहरे में काम की जगह पहुंचे। अदालत का आदेश सिर्फ उन्हें काम की जगह पहुंचाने के लिए सुरक्षा इंतजाम करने का था। अर्धसैनिक बल उन्हें वहां पहुंचाकर लौट गया। फिर काम की जगह पहुंचे 170 मजदूर वहीं फंस गये।

पहली अप्रैल से पहली मई तक छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का स्लो डाउन जारी रहा। फिर 2 मई से हड़ताल। भिलाई स्टील प्लांट को रोज चालीस लाख रुपये का नुकसान होता रहा। केंद्रीय इस्पात मंत्रालय में हलचल मच गयी। इस्पात मंत्री माखन

लाल पोतेदार के साथ नियोगी की बैठक हुई। उन्होंने कहा कि मशीनीकरण रोक पाना उनके बस में नहीं क्योंकि यह राष्ट्रीय औद्योगिक नीति के तहत हो रहा है। विभागीकरण की मांग का औचित्य मानते हुए उन्होंने कहा कि दल्ली राजहरा के दस हजार ठेका मजदूरों का विभागीकरण कर दिया जाये तो भारतभर में खदानों में काम कर रहे करीब एक लाख ठेका मजदूरों के विभागीकरण की जिम्मेदारी मंत्रालय पर होगी। इसलिए जो भी फैसला करना हो, भिलाई स्टील प्लांट के स्तर पर करना होगा।

दो मई से हड़ताल शुरू हो गयी। 24 मई को मजदूर काम पर जरूर लौटे लेकिन दबाव बनाये रखने के लिए स्लो डाउन जारी रहा।

एआईटीयूसी ने फिर दहशतगर्दी शुरू कर दी तो छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के प्रतिरोध में इलाके के व्यवसायी और दूसरे तमाम तबकों के लोग भी शामिल हो गये।

जून महीने में पहले विधायक जनक लाल ठाकुर ने 19 दिनों तक अनशन किया और फिर कामरेड शंकर गुहा नियोगी ने 12 दिनों तक अनशन किया। दूसरी तरफ मजदूरों ने अवरोध आंदोलन जारी रखा। आखिरकार 12-13 अगस्त को छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ और भिलाई स्टील प्लांट मैनेजमेंट के बीच एक करारनामे पर दस्तखत हो गये। करार में निम्न शर्तें शामिल थीं।

1. **ठेकेदारी और सहकारिता समितियों के अंतर्गत काम करने वाले करीब दस हजार मजदूरों को ग्रेच्युटी का हकदार मान लिया गया। 1972 में ग्रेच्युटी कानून पास होने के बाद पहली बार ठेका मजदूरों को ग्रेच्युटी मिली।**
2. **साल में सात दिनों का कैजुअल और पांच दिनों का फेस्टिवल लिव मिला।**
3. **तय हुआ कि कोंडेकसा 'बी' में मिट्टी और गैरजरूरी पत्थर के स्तर हटाने के लिए ही शावेल और बुलडोजर का इस्तेमाल होगा। खनन किस पद्धति से होगा, इस पर खदान प्रबंधन छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के साथ सलाह मशविरा करके फैसला करेगा।**
4. **जब तक मौजूदा पीढ़ी के मजदूर काम पर होंगे, तब तक कोंडकसा 'ए', मयूरपानी और झरन दल्ली में मशीनीकरण नहीं होगा।**
5. **विभागीकरण का काम शुरू होगा।**

इस तरह फिर एकबार मजदूर आंदोलन की वजह से मशीनीकरण रुक गया।

नियोगी की हत्या और मशीनीकरण

28 सितंबर, 1991 को भिलाई के भिलाई के उद्योगपतियों के सुपारी किलरों की गोली

से कामरेड शंकर गुहा नियोगी शहीद हो गये। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में विचारधारा की लड़ाई जारी रही- वर्ग संघर्ष बनाम वर्ग समझौता। (इस बारे में बाद में बतायेंगे)।

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नेतृत्व पर समझौतावादी काबिज हो गये। भिलाई इस्पात कारखाना मैनेजमेंट को उनके बीच अपने दोस्त मिल गये। 1994 के बीचोंबीच छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नेतृत्व ने विभागीकरण के बदले मशीनीकरण के लिए खदान छोड़ देने के समझौते पर दस्तखत कर दिये।

यह समझौता अंग्रेजी में लिखा गया था, जिसका अनुवाद करके शहीद अस्पताल के डॉक्टरों ने मजदूरों को पढ़ाना शुरू किया। उन्होंने दिखाया कि उम्रदराज मजदूर विभागीकरण के दायरे में नहीं आते, किस तरह विभागीकरण से पहले मजदूरों को मेडिकल जांच के बहाने अयोग्य घोषित करके छांट दिया जाना है..।

डॉक्टरों को सबक सिखाने के लिए पहले मुझे संगठन से निलंबित और बाद में निष्कासित कर दिया गया। इसके विरोध में दो और डॉक्टरों ने इस्तीफा दे दिया। किंतु हम उस समझौते पर अमल रोक नहीं सके।

दल्ली राजहरा : आबादी घट गई

मैंने 1994 में दल्ली राजहरा छोड़ दिया था, जहां फिर तेरह साल बाद 2007 में गया। एक लाख बीस हजार की आबादी वाले दल्ली राजहरा की जनसंख्या तब तक चालीस हजार तक सिमट चुकी थी। शहर में अब साईकिल रिक्शा नहीं चलते। भिलाई इस्पात कारखाना के जो नियमित और विभागीय मजदूर शहर में रहते हैं, उनके पास अब स्कूटर, मोटर साइकिल- गाड़ी हैं, उन्हें रिक्शा की जरूरत नहीं होती। अनेक दुकानें हमेशा के लिए बंद हो गयीं। सिनेमा हाल बंद हो गये। जिनके दरवाजे पर घास उग आई हैं...

विभागीकरण के दायरे में वरिष्ठ मजदूर नहीं आये तो उन्हें स्वेच्छा से सेवानिवृत्ति का प्रलोभन दिया गया। मेडिकल टेस्ट में ढेरों लोग अनफिट हो गये। जो फिट निकले, उन्हें स्थाई करके अन्यत्र स्थानांतरित कर दिया गया। पति पत्नी को अलग अलग जगह काम मिलने की स्थिति में पत्नी को काम छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा..। नियोगी परवर्ती नेतृत्व ने मशीनीकरण समझौते पर दस्तखत करके छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ को ही विनाश की ओर धकेल दिया नियोगी परवर्ती नेतृत्व ने।

दल्ली राजहरा के लोहा खदान ठेका मजदूरों ने सोलह साल तक लड़ाई करके मशीनों को रोक दिया था, मजदूरों की छंटनी रोक दी थी। उनके आंदोलन के सकारात्मक नकारात्मक आयाम दूसरे मजदूरों को शिक्षित बनायेगा, मेरी ऐसी धारणा है।

छत्तीसगढ़ का नारी आंदोलन

2-3 जून, 1977 के ग्यारह शहीदों में अनुसुइया बाई भी शामिल थीं। लाल हरे झंडेवाली पहली यूनियन छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने समग्र श्रमिक जीवन को अपने कार्यक्रम में लाने के लिए जिन सत्रह विभागों का गठन किया, उनमें एक महिला विभाग भी शामिल था, जो बाद में छत्तीसगढ़ महिला मोर्चा बन गया। जिनकी मृत्यु के बाद मजदूरों ने अपना अस्पताल बनाने का संकल्प किया, वे भी एक महिला थीं- यूनियन की उपाध्यक्ष कुसुम बाई।

दल्ली राजहरा के मजदूरों की कामयाबी से प्रेरित होकर छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ में सबसे पहले बीएसपी (भिलाई स्टील प्लांट) के कैप्टिव खदानों- दुर्ग जिले के दानीटोला कोयार्जाइट खदान, बिलासपुर जिले के हीररी और बरदुआर डोलामाइट खदान, राजनांदगांव जिले के चांदीडुंगरी फ्लुराइट खदान, बस्तर जिले के आरिडुंगरी लोहा खदान के ठेका मजदूर शामिल हो गये। इसके बाद क्रमशः राजनांदगांव के बेंगल नागपुर काटन मिल्स के मजदूरों ने राजनांदगांव कपड़ा मजदूर यूनियन बना ली, राजनांदगांव के राजाराम मेइज फैक्ट्री (ग्लूकोज फैक्ट्री) के मजदूरों ने बनाई छत्तीसगढ़ केमिकल मिल मजदूर संघ तो भिलाई स्टील प्लांट के मजदूरों ने छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ का गठन कर दिया। रायपुर और दुर्ग जिले के गरीब खेतिहर मजदूर छत्तीसगढ़ ग्रामीण श्रमिक संघ बनाकर संगठित हो गये। 1990 में भिलाई मजदूर आंदोलन के वक्त प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ और प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ भी बन गये।

जहां जहां लाल हरा संगठन गांव या शहर में बना, वहां वहां साथ साथ महिला मजदूरों की अगुवाई में महिला मुक्ति मोर्चा का स्थानीय संगठन भी बनता रहा।

महिला मुक्ति मोर्चा के प्रस्तावित लक्ष्य इस प्रकार था :

1. स्त्री नेतृत्व का विकास
2. स्त्री का सामंततांत्रिक शोषण रोकना
3. समाज के दूसरे शोषित तबकों के साथ मैत्री

4. पूंजीवादी शोषण का प्रतिरोध
5. श्रमिक वर्ग में नये मूल्यबोध के प्रसार के लिए संघर्ष

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संगठनों में महिलाओं को कितना महत्व मिलता था, वह छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की सबसे पुरानी शाखा दल्ली राजहरा शाखा के उदाहरण से समझा जा सकता है। मैनुअल खदान में रेजिंग यानी पत्थर तोड़ने का काम मर्द औरत दोनों किया करते थे। जबकि ट्रांसपोर्टिंग अर्थात ट्रकों में तोड़े गये पत्थर भरने का काम सिर्फ पुरुष करते थे। खदान इलाके में जिस अनुपात में महिला और पुरुषों की संख्या थी, उसी अनुपात में स्त्री पुरुष मुखिया का चुनाव होता था। लेकिन ट्रांसपोर्टिंग में महिला श्रमिक न होने की वजह से स्त्री मुखिया की कुल संख्या पुरुषों के मुकाबले कम हो जाती थी।

आर्थिक मांगों को लेकर चाहे ट्रेड यूनियन के आंदोलन हो या फिर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के विभिन्न आर्थिक सामाजिक राजनीतिक आंदोलन- सर्वत्र महिला नेत्री या महिला श्रमिक की अग्रणी भूमिका होती थी। 1977 में अनुसुइया बाई की शहादत के बारे में पहले ही बता दिया है।

मजदूर आंदोलन तोड़ने के लिए 1981 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नेताओं को राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (एनएसए) के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। इन नेताओं की रिहाई की मांग लेकर दल्ली राजहरा की महिलाओं ने 144 धारा तोड़कर विशाल जुलूस निकाला। पुलिस उन्हें गिरफ्तार करके दूधमुंहे बच्चों के साथ दूर जंगल में छोड़ आयी। बहुत कष्ट उठाकर वे पैदल शहर लौट आयीं और लौटते ही फिर उन्होंने आंदोलन शुरू कर दिया।

लड़ाई करके दल्ली राजहरा की महिलाओं ने मैटरनिटी बेनिफिट यानी मातृत्व लाभ पाने का हक भी हासिल कर लिया। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के मशीनीकरणविरोधी आंदोलन की चर्चा इससे पहले की है। उस आंदोलन में भी पुरुषों का कदम से कदम मिलाकर साथ दिया महिला मजदूरों ने। मर्दों के साथ खड़े होकर उन्होंने ठेकादार की मशीनों को रोका, सभाओं और जुलूसों में हिस्सा लिया। महिलाओं की ऐसी ही हिस्सेदारी भिलाई के मजदूर आंदोलन में भी थी।

यह तो ट्रेड यूनियन में महिलाओं की हिस्सेदारी का किस्सा है। अब महिला मुक्ति मोर्चा के कामकाज की बात करें। महिला मुक्ति मोर्चा ने सबसे ज्यादा सक्रियता शराबबंदी आंदोलन में दिखायी। घर घर शराबबंदी का संदेश उन्होंने पहुंचा दिया, मोहल्लों में शराबबंदी समितियां उन्होंने बनायीं। शराब छोड़ने की कसम उठाकर उसे तोड़ने वाले पुरुषों को सजा देने की जिम्मेदारी भी उन्होंने उठायी। यहां उसे कि पति ने अगर कसम तोड़ दी तो उसे सजा देने में उसकी पत्नी नहीं हिचकी।

गौरतलब है कि दल्ली राजहरा के ज्यादातर ठेका मजदूर आदिवासी थे। जाहिर तौर पर आदिवासी परिवार में समाज के दूसरे तबकों की तुलना में महिलाओं की ज्यादा इज्जत होती है। जिन परिवारों में पति पत्नी दोनों खदान में काम करते थे, वहां उन परिवारों में दोनों का करीब करीब समान सम्मान था और उनकी आर्थिक आजादी भी करीब करीब बराबर थी। जिन परिवारों में सिर्फ मर्द खदान में काम करते थे, उन सभी परिवारों में महिलाएं जंगल से लकड़ी लाकर, राज मिस्त्री के जुगाड़ बतौर काम करके या फिर रास्ता बनाने का काम करके काफी पैसे कमा लेती थीं, जिससे उन्हें तमाम हक मिल जाते थे।

1977 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ बनने से पहले भिलाई इस्पात कारखाने के कुछ अफसर, ठेकेदार और उनकी गुंडा वाहिनी के लोग महिला मजदूरों का शारीरिक शोषण किया करते थे। नयी यूनियन बन जाने के बावजूद कभी कभार दूसरी महिलाओं के साथ शारीरिक शोषण की वारदातें हो जाती थीं। ऐसे मामलों में महिला मुक्ति मोर्चा स्त्री की मर्यादा की लड़ाई में कूद पड़ता था महिला मुक्ति मोर्चा। ऐसी ही एक घटना 1980 में हो गयी, जब सीआईएसएफ के कुछ जवानों ने एक आदिवासी युवती से बलात्कार करने की कोशिश की। अपराधियों को सजा की मांग लेकर महिलाओं ने विरोध प्रदर्शन किया और शहर के सभी तबके के मेहनतकश लोगों ने उनका साथ दिया। प्रदर्शनकारी जनता पर पुलिस ने गोली चला दी, जिससे एक व्यक्ति शहीद हो गया। किंतु अंत में दोषियों को सजा भी मिल गयी।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा से जुड़ी दूसरी बड़ी ट्रेड यूनियन बीएनसी मिल राजनांदगांव कपड़ा मजदूर संघ थी। टेक्सटाइल मिल के करीब साढ़े तीन हजार मजदूरों में तीन हजार इस यूनियन के सदस्य थे, जिनमें बड़ी संख्या महिला मजदूरों की थी। मिल में काम का पर्यावरण गर्म होने के खिलाफ 1984 में यूनियन ने हड़ताल कर दी। आईएनटीयूसी की गुंडावाहिनी और पुलिस ने आंदोलन के खिलाफ व्यापक दमन का रास्ता अपनाया। चार मजदूर शहीद हो गये। मजदूर बस्तियों में कर्फ्यू लागू करके मजदूरों से कर्फ्यू की आड़ में मारपीट की गयी। कुछ महिलाओं पर शारीरिक अत्याचार भी हुए। मैनेजमेंट ने हड़ताली नेताओं के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई कर दी। नेताओं को सजा के खिलाफ यूनियन के आंदोलन में राजनांदगांव और आसपास के गांवों के गैरश्रमिक स्त्री पुरुष भी शामिल हो गये। 1984 में अगस्त से अक्तूबर तक 35 महिलाएं इस सिलसिले में जेल में कैद रहीं, जिनमें 17 महिलाएं मजदूर नहीं थीं। 1984 में ही हड़ताल खत्म हो गयी।

छत्तीसगढ़ की उत्पीड़ित महिलाओं के लिए उम्मीद का आह्वान लेकर बना था

महिला मुक्ति मोर्चा-

तोड़ तोड़ के बंधनों को
देखो, बहनें आती हैं।
ओ देखो, लोगों देखो
देखों बहनें आती हैं।
आयेगी जुलुम मिटायेगी
वो तो नया जमाना लायेगी।

कामरेड नियोगी की हत्या के बाद राजनीति और ट्रेड यूनियनों के कमजोर होते जाने के साथ साथ महिला मुक्ति मोर्चा संगठन भी कमजोर होता गया। किंतु छत्तीसगढ़ स्त्री आंदोलन के इतिहास से सीखने के सबक काफी हैं।

(सूत्रः लाल हरे झंडे के आंदोलनों में महिलाओं की हिस्सेदारी, छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ प्रकाशन, 1987)

शराबबंदी आंदोलनः दल्ली राजहरा की अभिज्ञता

दल्ली राजहरा के मजदूरों में ज्यादातर आदिवासी थे। दूसरे जन समुदायों के लोग कम थे। आदिवासी लोग शराब पीने को अपराध नहीं मानते हैं। जंगल से महुआ बटोरकर वे घर में शराब बना लेते हैं। किसी भी पारिवारिक अनुष्ठान, किसी भी सामाजिक उत्सव का मद्यपान अभिन्न हिस्सा है। स्त्री, पुरुष, वयस्क अल्पवयस्क-उत्सव में सारे के सारे शराब पीयेंगे- यही रीति है।

यह रीति दल्ली राजहरा में टूट गयी। 1977 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ यूनियन बनने से पहले जहां 95 प्रतिशत मजदूर शराब का नशा करते थे, वहां शराब पीने वालों की तादाद पांच फीसद तक सिमट गयी। जबकि 1991 में शंकर गुहा नियोगी के शहीद होने के वक्त पूरे भारत में वहां के मजदूर सबसे ज्यादा दैनिक मजदूरी कमाने वाले थे। किस तरह उन्होंने शराब का नशा छोड़ दिया, आज की कथा वही है। 1977 से पहले ये मजदूर दो केंद्रीय मजदूर यूनियनों में बंटे थे। दिनभर हाड़तोड़ परिश्रम करके इन्हें तीन से साढ़े तीन रुपये की मजदूरी मिलती थी। भरपेट खाना, पहनने को कपड़ा नसीब नहीं होता था। इन मजदूरों के बच्चे स्कूल का चेहरा तक देख नहीं पाते थे।

1977 को आर्थिक आंदोलन में पहली जीत के बाद इनकी दैनिक मजदूरी सोलह रुपये हो गयी। मजदूरों की पगार बढ़ने का सीधा असर हुआ शराब की बिक्री पर। 1976-77 में दल्ली राजहरा में देशी शराब 24, 588 प्रूफ लीटर बिकी तो 1977- 78 में यह बढ़कर 25, 304 प्रूफ लीटर हो गयी। नियोगी ने महसूस किया और मजदूर नेताओं को अहसास कराया कि यदि मजदूरों में शराब का नशा दूर नहीं हुआ तो मजदूरी बढ़ने के बावजूद उनकी जीवन यात्रा के स्तर में कोई विकास नहीं होगा।

फिर छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने शराबबंदी के लिए प्रचार शुरू कर दिया। शराब के शारीरिक, पारिवारिक और सामाजिक कुप्रभाव समझाने के लिए छोटी छोटी सभा, प्रचार पत्र पोस्टर आदि की मदद ली जाने लगी। मजदूर समझने लगे, लेकिन

इस बुरी लत से छूटकारे के लिए एक बड़े धक्के की जरूरत थी।

ऐसी ही एक घटना 1978 में हो गयी। शहर से 6-7 किमी की दूरी पर एक गांव चिखली में एक आदिवासी परिवार ने अपने इस्तेमाल के लिए शराब बनायी। कानून आदिवासियों को शराब बनाने के लिए कुछ रियायतें देता है- जिसके तहत वे अपने घर में शराब तो तैयार कर सकते हैं लेकिन उसे बाजार में बेचने की इजाजत नहीं है। आदिवासी अगर अपने लिए शराब खुद ही बना लें तो शराब ठेकेदार की दुकान से शराब कौन खरीदेगा? इसलिए दल्ली राजहरा के ठेकेदार यह चाहते नहीं थे कि आदिवासी अपने लिए खुद शराब बनाये। उस वक्त दल्ली का ठेकेदार तत्कालीन सत्तादल कांग्रेस का सदस्य था, वह भी स्थानीय विधायक, फिर वे उस वक्त राज्य के वित्तमंत्री झुमकलाल भेड़िया के खासम खास आदमी थे। ठेकेदार को खबर मिली तो उसने चिखली गांव के उस परिवार के पति पत्नी को आबकारी पुलिस से गिरफ्तार करवा दिया। उन्हें पकड़ कर ठेकेदार के घर ले आया गया। उनसे मारपीट की गयी और उनके पैर में तेजाब डाल दिया गया। वहां शराब पीने पहुंच गये छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के कुछ सदस्यों ने पति पत्नी की चीख पुकार सुन ली। यूनियन दफ्तर तक खबर हो गयी। कुछ ही देर में हजारों मजदूरों ने शराब भट्टी को घेर लिया और गुंडों के कब्जे से पति पत्नी को बचा लिया। ठेकेदार ने पिछवाड़े के दरवाजे से भाग निकल कर अपनी जान बचायी।

सालभर से मजूदर बार बार अपने नेताओं की जुबानी सुन रहे थे कि किस तरह पूंजीपति शराब के जरिये मेहनकश लोगों का शोषण करते हैं। इस वारदात से उन्होंने शोषण का नंगा चेहरा अपनी आंखों से देख लिया। फिर एक आम सभा में हजारों मजदूरों ने शराब छोड़ने का संकल्प कर लिया। किंतु कहने से ही बुरी लत छूटती है क्या? तब मजदूरों ने खुद ही कसम तोड़ने वालों के लिए आर्थिक और सामाजिक दंड तय कर दिया। कुछ मजदूर शारीरिक रूप से शराब पर निर्भर थे (Physically dependent)- उनके लिए खास इंतजाम यह हुआ कि उन्हें परमिट दिया जाने लगा और वह परमिट दिखाकर ही वे दुकान से तय मात्रा में शराब खरीद सकते थे।

शराब की लत छुड़ाने के लिए छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने कुछ नायाब तौर तरीके आजमाये, जिन्हें अमली जामा पहनाने के लिए नारी श्रमिकों और इलाके में महिलाओं के संगठन महिला मुक्ति मोर्चा की खास भूमिका हुआ करती थीः

- कोई नशे की हालत में पकड़ा गया तो अगले दिन यूनियन दफ्तर में मौजूद लोगों के मुखातिब होकर उस शराब पीने के हक में भाषण देने को कहा जाता था।
- मर्द मजदूर अगर शराब पीकर पत्नी बच्चों से मारपीट करता तो वे यूनियन दफ्तर में शिकायत कर देते। दोषी के बारे में फैसला महिला मुक्ति मोर्चा

मुखिया महिलाएं करतीं। कभी कभी सजा बतौर जुर्माना किया जाता, उस पैसे का 5-10 फीसदी हिस्सा यूनियन फंड में जमा हो जाता और बाकी हिस्सा उस मजदूर की जानकारी के बिना उसकी पत्नी को दे दिया जाता।

- बार बार कसम तोड़ने पर मजदूर को खदान के काम से सस्पेंड करके उस यूनियन के काम पर लगाया जाता था।
- **जो शराब छोडना चाह रहे थे, लेकिन इस बुरी लत से छूटकारा पाने में नाकाम हो रहे थे, ऐसे मजदूरों को यूनियन के नेता लगातार कुछ दिन शाम के वक्त अपने साथ रखते थे। इस तरह नशा का वक्त टल जाता था और और नेताओं की जीवन यात्रा, विचारधारा और कामकाज का असर मजदूर पर भी हो जाता।**
- **शराब से मजदूरों को दूर रखने के लिए शाम को लोकगीत, नाटक, इत्यादि सांस्कृतिक कार्यक्रमों के मार्फत मनोरंजन का इंतजाम किया जाता।**

इस इंतजामात का नतीजा कैसा रहा, 1982 में प्रकाशित पीपुल्स यूनियन आफ लिबर्टीज (PUCL) की रपट 'जनवादी आंदोलन बनाम शराब, पूंजी और हिंसा की राजनीति' से इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। देखा गया कि 1978 से लेकर 1982 के बीच दस हजार से ज्यादा लोगों ने शराब छोड़ दी। 1981 में एक पत्रकार ने देखा कि जहां पहले पाक्षिक पगार के दिन दल्ली राजहरा में करीब पांच हजार बोतल शराब बिकती थी, वहां शराबबंदी की वजह से सिर्फ चालीस पचास बोतल शराब ही बिक रही थी। उन्होंने खोज खबर लेकर पाया कि शराब की दुकान के ठेकेदार ने सोलह लाख रुपये देकर शराब की दुकान का ठेका लिया था, लेकिन उससे दो लाख रुपये की भी आय नहीं हो सकी।

जाहिर है कि सत्ता गिरोह और शराब के कारोबारी हाथ पर हाथ धरे खामोश बैठे नहीं रहे। आंदोलन तोड़ने के मकसद से 11 फरवरी 1981 को यूनियन के तत्कालीन सभापति सहदेव साहू और संगठन सचिव शंकर गुहा नियोगी को राष्ट्रीय सुरक्षा अधि ानियम के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। 18 अप्रैल, 1982 को ठेकेदार के ट्रक से 'अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद' की राजहरा शाखा के सभापति को कुचलकर मार देने की कोशिश की गयी। लेकिन इन वारदातों से आंदोलन को वे तोड़ नहीं सके। हर दमन पीड़न जुल्मोसितम के जबाव में मजदूर और ज्यादा पक्के मजबूत होते चले गये।

नियोगी ने इस आंदोलन पर सत्ता वर्ग के हमले की धार कुंद करने के मकसद से गांधीवादियों की पहल से बनी अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद को इस आंदोलन के

साथ जोड़ लिया था। परिषद की नेता सुशीला नायर और पश्चिम बंगाल के फारवर्ड ब्लाक नेता भक्ति भूषण मंडल आंदोलन के साथ एकजुटता दिखाते हुए मजदूरों के साथ खड़े हो गये।

1981 में शराबबंदी आंदोलन जब पूरी मजबूती के साथ जारी था, उसी वक्त कुछ सामाजिक रूप से सचेतन चिकित्सक श्रमिक संघ के साथ काम करने आ गये, जिनके बारे में स्वास्थ्य आंदोलन के प्रसंग में पहले ही चर्चा की है। इन्होंने शराब पीने के शारीरिक कुप्रभाव के बारे में लोगों को सचेत करने के लिए छोटी छोटी संगोष्ठियों का आयोजन का सिलसिला बनाया और पत्र पत्रिकाओं में भी वे लिख रहे थे। 1980 के दशक के आखिर में लोक स्वास्थ्य शिक्षामाला का 'शराब पीने के बारे में सही जानकारी' पुस्तिका का प्रकाशन शुरू हुआ। शराब पर शारीरिक रूप में निर्भर लोगों को अस्पताल में भर्ती करके उनकी शराब की लत छुड़ाने को कोशिशें भी जारी रहीं।

1978 से 1990 (अर्थात जिस वक्त पहली दफा यह आलेख मैंने लिखा) के दौरान दल्ली राजहरा में ठेकेदार की शराब की दुकान नहीं थी। शराब सरकारी देशी शराब की दुकान पर बिकती थी। जो थोड़े लोग शराब पीते थे, वे भी आंदोलन की वजह से पहले की तरह खुल्लम खुल्ला शराब नहीं पीते थे या नियमित शराब नहीं पीते थे। इलाके के लोग शराब पीने को सामाजिक अपराध मानने लगे थे। उम्मीद की किरण थी कि नई पीढ़ी यानी छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सदस्यों की संतानों में शराब पीने की दर लगभग शून्य हो गयी थी।

शराबबंदी आंदोलन की वजह से मजदूरों के जीवन स्तर में सुधार आया। 1960 के दशक के बीचोंबीच जो लोग रोजगार की तलाश में गांव छोड़कर लोहा खदान में बतौर ठेका मजदूर भर्ती हो गये, उनमें से ज्यादातर गांव में जमीन के मालिक भी बन गये थे। लिहाजा बैंक खातों में उनकी बचत जमा होने लगी। पहले मजदूरों के पास साईकिल तक नहीं होती थी। अब सबके पास साइकिले तो थीं ही, बहुतों ने मोपेड, स्कूटर या मोटर साईकिल खरीद ली। 20-25 साल पहले जो ट्रक ड्राइवर की हैसियत से काम में लगे थे, अपनी बचत की वजह से वे ट्रकों के मालिक बन गये। मजदूरों के परिवार के बच्चों में अब कोई अपढ़ नहीं रहा। यहां तक कि ग्रेजुएट और पोस्ट ग्रेजुएट भी उन परिवारों से निकलने लगे। अनेक बच्चे स्कूल कालेज में शिक्षक बन गये और सरकारी कर्मचारी भी हो गये। दल्ली राजहरा के मजदूर परिवारों से अब तहसीलदार और डिप्टी मजिस्ट्रेट भी बनने लग गये। शराबबंदी आंदोलन ने सचमुच दल्ली राजहरा की जीवन धारा ही बदल डाली। दल्ली राजहरा के कामयाब शराबबंदी आंदोलन से सबक लेकर तेलगंना सामाजिक आंदोलन के संगठकों और तत्कालीन उत्तर प्रदेश के उत्तराखंड की उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी

के आंदोलनकारियों ने बड़े पैमाने पर लोगों को नशामुक्त कर दिया।

अफसोस का माला यह है कि नियोगी की हत्या के बाद नेतृत्व के विचलन, मशीनीकरण समझौता के जरिये संगठन को विलुप्ति के रास्ते पर धकेलने जैसे कदमों का असर शराबबंदी आंदोलन पर भी हो गया। 2007 में दल्ली राजहरा जाकर मैंने अपनी आंखों से देखा है कि जिन लोगों ने शराब छोड़ दी थी, यहां तक कि यूनियन के नेतृत्व में भी जो लोग थे, उन लोगों ने हताशा से निजात पाने के लिए फिर शराब पीनी शुरू कर दी है। शहीद अस्पताल में जो ऑपरेशन में मेरी मददगार हुआ करता था, एक लैबरेटरी टेक्नीशियन (ग्रेजुएट)- जिसके पिता गीतकार थे, जिन्होंने शराबखोरी के खिलाफ अनेक गीत लिखे और गाते रहे- ऐसे लोग भी अब खाली समय में कुछ करने को नहीं होने की वजह से शराब पीने लगे हैं।

श्रमिक संस्कृतिकर्मी फागुराम यादव

मेरे सहयोद्धा रहे फागुराम यादव ने 6 मई, 2015 को किसी समय आखिरी सांसें लीं। आधुनिक भारत में मजदूर आंदोलन की चर्चा हो तो छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की बात निकल पड़ती है। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के प्रधान संगठक शंकर गुहा नियोगी का नाम याद आ जाता है। याद आती है दल्ली राजहरा के वीर लोहा खदान मजदूरों के संघर्ष, आत्म बलिदान, जीत की कहानी। उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के मुक्ति आंदोलनों पर चर्चा चलायें तो छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की बात निकल आती है। ठीक इसी तरह छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की चर्चा करें तो फागुराम यादव का नाम आ जाता है। इस आंदोलन के प्रधान गीतकार थे फागुराम यादव।

फागुराम यादव कोई बुद्धिजीवी नहीं थे। वे लोहा खदान में ट्रांसपोर्ट मजदूर थे। ट्रकों में लोहा लादना उनका काम था। गांव की पाठशाला में चौथी के आगे पढ़ने का मौका उन्हें नहीं मिला। उनका जन्म रायपुर जिले के चंओर गांव में 1946 में हुआ। पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गयी। पटाखे बेचकर मां बच्चों का पालन पोषण करती थीं। दूसरों के टूटे स्लेट के टुकड़े जुगाड़ कर गुरुजी की सेवा करके फागुराम की पढाई हुई। चौथी के आगे पढ़ाई जारी नहीं रह सकी क्योंकि आजीविका के लिए तब उन्हें दूसरों के खेत में खेतिहर मजदूर बनकर काम करना था। बचपन से फागु विशेष गुण से समृद्ध थे और गांव में होने वाली किसी भी घटना पर गीत बनाकर सुर में वे गा सकते थे। 1973-74 में छत्तीसगढ़ में भयंकर अकाल पड़ा। उसी वक्त काम की खोज में फागुराम दल्ली राजहरा चले आये। तभी से वह भिलाई स्टील प्लांट के दल्ली राजहरा लोहा खदान में ठेका ट्रांसपोर्ट श्रमिक थे।

उस वक्त ठेका मजदूरों का अमानुषिक शोषण होता था। भोर तड़के अंधेरा रहते रहते ठेकेदार का ट्रक मजदूरों को उठा लेता था। फिर 14-15 घंटे तक हाड़ तोड़ काम करके शाम को घर वापसी होती थी। इतनी मेहनत मशक्कत के बाद मजदूरी में मिलते थे सिर्फ दो या तीन रुपये। दोनों जमी जमाई यूनियनें आईएनटीयूसी और एआईटीयूसी मजदूर के हित न देखकर मैनेजमेट और ठेकेदारों के हित साधने में लगी

थीं। इन दोनों यूनियनों के अन्यायपूर्ण बोनस समझौते के खिलाफ मजदूरों ने उन यूनियनों को छोड़कर 3 मार्च, 1977 को अपनी आजाद यूनियन बना ली- छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ। पुरानी दो यूनियनों के तिरंगा और लाल झंडे के बदले उन्होंने लाल हरा झंडा हाथों में उठा लिया, जो मजदूर किसान मैत्री का प्रतीक है। यूनियन गठन के तीन महीने बाद घर की मरम्मत के लिए बांस बल्ली खरीदने के भत्ते की मांग लेकर चले आंदोलन को तोड़ने के लिए आंदोलनकारी मजदूरों पर पुलिस ने गोली चला दी। ग्यारह मजदूर शहीद हो गये। मजदूर आंदोलन की प्रेरणा से फागुराम ने नई तरह के गीत लिखना चालू कर दिया। संघर्ष के गीत। राजनीतिक चेतना के प्रसार के गीत। 28 सितंबर, 1991 को कामरेड शंकर गुहा नियोगी की हत्या के बाद आंदोलन कमजोर हो जाने की वजह से उनकी लेखनी धीमी जरूर हुई है, लेकिन रुकी नहीं।

फागुराम की प्रतिभा का मूल्यांकन विश्लेषण करने की क्षमता या योग्यता मेरी नहीं है। किंतु वे 1986 से लेकर 1994 तक मेरे सहयोद्धा रहे हैं, इसलिए मुझे यह लिखना पड़ रहा है। मैंने बांग्ला में लिखा है और फागुराम छत्तीसगढ़ी भाषा में लिखते थे। उनके कुछ खास गीतों का अधकचरा बांग्ला अनुवाद करके मुझे यह समझाने की कोशिश करनी है कि कि वे कैसे गीतकार रहे हैं। 1989 में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के प्रकाशन विभाग लोक साहित्य परिषद ने फागुराम यादव के चुने हुए गीत प्रकाशित किया था। उस संग्रह से ही ये गीत लिये गये हैं।

मजदूर कवि फागुराम यादव के पहले चरण के गीतों में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के जन्म का इतिहास का खूबसूरत ब्यौरा इस प्रकार हैः

शहीद मन के छत्तीसगढ़ भूइयां मा हावे कुरबानी गा,
लहू के रंग मा लिखागे सगी लाल हरा के कहानी गा।
छत्तीसगढ़ के मजदूर मन हा दल्ली राजहरा मा आइन गा,
लोहा के पथरा ला फोर फोर के भिलाई ला उत्पादन कराइन गा,
सदा उत्पादन वर जोर लगाथे इये मजदूर के वाणी गा।
लहू के रंग में लिखागे....

लोहा के पथरा फोराइया मन हा अपन पसीना बोहाइन गा,
दिनभर करीन कड़ा मेहनत गा सही मजदूरी नइ पाइन गा।
आधु मा रोहिन दलाल मन हा लूट-लूट के खावन लगीस,
छत्तीसगढ़िया मजदूर ऊपर शोषण अत्याचार होवन लगीस,
तब पापी मन वर जन्म धरीस दु रंग वाला निशानी गा।
लहू के रंग में लिखागे...

छत्तीसगढ़ माइंस मजदूर संघ हा जब जनम धरके आइस गा,
शोषण ले मुक्ति करेवर हर मजदूरला जगाइस गा,
जाग उठीन सब मजदूर साथी, दुश्मन होगे हैरानी गा।
लहू के रंग में लिखागे...

(भावार्थः छत्तीसगढ़ के मजदूर लोहा पत्थर तोड़कर भिलाई इस्पात कारखाने को भेजने के काम के लिए दल्ली राजहरा आये थे। मैनेजमेंट उनसे उत्पादन, और उत्पादन चाहता था। पत्थर तोड़ने में खून पसीना एक करने के बावजूद उन्हें सही मजदूरी नहीं मिली। दलाल नेता मजदूरों को लूटते रहे। छत्तीसगढ़ी मजदूरों के गम का इंतहा नहीं कोई। ऐसे में जन्म हुआ लाल हरा दुरंगे झंडे का। जन्म हुआ छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का, जिसका आह्वान आजादी का। जाग उठे मजदूर और दहशत में मालिकान।)

फागुराम यादव के एक अन्य गीत के एक अंश का अनुवाद इस प्रकार हैः

हजारों हजार मजदूर ईंट
गूंथ गये एकता सीमेंट से,
तैयार हुआ लोहा दीवाल बांध।
बांध से निकली नाली बहने लगी
विलासपुर की हिररी में,
राजनांदगांव, दानीटोला में।
जिसने नहा लिया इस पानी में
वह बनके निकला नया इंसान।

लाल हरे झंडे का तात्पर्य समझाते हुए मजदूर कवि फागुराम यादव ने लिखा हैः

मेहनतकश के हितकारी हे ये दु रंग वाली निशानी हे,
लाल रंग मजदूर मनके अउ हरिहर रंग किसानी के,
दोनों रंग एकी में मिलके जइसे गंगा यमुना का पानी हे..
लड़ने में बड़ा बांका है, ये दु रंग वाला पताका हे,
मजदूर के खून मा रंगे हावे, दुश्मन वर एक धमाका हे..
हवा मा लहराके चमकत हे, मानो तो हमार विधाता हे।
लाल हरा झंडा हमारा..

(भावार्थः मेहनती इंसानों का यह दुरंगा निशान है, लाल रंग मजदूरों का तो हरा रंग किसानों के, जैसे मिले गंगा यमुना का जल। लड़ाई के टेढ़े मेड़े रास्ते पर बढ़ते जाने में डर नहीं कोई, मजदूरों के खून से रंगा ये पताका, दुश्मनों के लिए दहशत है।)

यूनियन बनने के बाद 1977 में मजदूरों का पहला आंदोलन अपनी

झोपड़ियों की मरम्मत के लिए बांस बल्ली की मांग को लेकर था। आंदोलनकारी मजदूरों पर पुलिस ने 2-3 जून 1977 को फायरिंग कर दी, जिसमें ग्यारह मजदूर शहीद हो गये। गोली चला कर आंदोलन का दमन नहीं किया जा सका। शहीदों के बलिदान ने दल्ली राजहरा के मजदूरों का संघर्ष को अपने इरादे में और मजबूत बना दिया। उन शहीदों की याद में मजदूर कवि फागुराम यादव का गीतः

शहीद भगत सिंह, वीरनारायण सिंह,
अनुसुइया बाई, जगदीश भाई,
ये सब एक हैं, एक हैं।
इनके संघर्ष आज भी जारी हैं,
आज का संघर्ष हमारी बारी है,
मरना है तो मरेंगे फिर भी बढ़ते जायेंगे,
तुम्हारे अरमान पूरे करते जायेंगे।
शहीद भगत सिंह..

हर जुल्म, हर अत्याचार
जूझेंगे हम बार बार,
मजदूर किसान मिलके आज
उठाये हैं हथियार,
शहीदों के खून से हम सब हैं तैयार...
शहीद भगत सिंह..

आर्थिक आंदोलन के साथ साथ दूसरे मोर्चों पर भी छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने काम करना शुरू कर दिया। उन सभी मोर्चों पर संगीत के रूपकार मजदूर कवि फागुराम यादव। फागु ने दूसरे मजदूर संस्कृतिकर्मियों रामलाल, लखन आदि के साथ मिलकर लोकतांत्रिक संस्कृति के प्रसार के लिए नया अंजोर सांस्कृतिक संस्था का निर्माण किया। छत्तीसगढ़ी में नया अंजोर का मतलब भोर की सूर्यकिरण है। संस्था के सभी कार्यक्रमों में जिस गीत के जरिये संस्था के उद्देश्यों की व्याख्या की जाती, वह गीत भी फागु का लिखा हैः

गांव के गली गली खोर खोर नवाँ अंजोर
बगराबो रे संगी नवाँ अंजोर।
नवाँ अंजोर के लाल किरण सब जगह बगरही, सब जगह बगरही
आँखें सबके खुल जही अँधियारी रात टरही, अँधियारी रात टरही,
हो जही बिहान जागही मजदूर अऊ किसान

भाग जाग जही सबके तोर मोर नवाँ अंजोर
बगराबो रे संगी नवाँ अंजोर..

(भावार्थः गांव गांव गली गली नवाँ अंजोर फैलेगा, बिखरेगी नयी सूर्य किरण, नये सूरज की लाल किरण, मनुष्य आँखें खोलकर देखेंगे, कटेगी अँधियारी। भोर होगी, जागेगा मजदूर किसान।)

1980-81 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का 'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष' आंदोलन शुरू हो गया। मजदूर कवि फागुराम यादव ने लिखाः

'चल संगबारी रे मितान, स्वास्थ्य बर गा संघर्ष करबो
ये जिनगी के करबो सुधार, हम गा बीमार मा काबर मरबो।'

(भावार्थःचलो साथी, चलो बंधु, स्वास्थ के लिए लड़ने चलो। जिंदगी में लायेंगे सुधार। फिर बीमार होकर क्यों मरेंगे।)

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के शराबबंदी आंदोलन में भी फागुराम की कलम चलीः

शराबी भइया रे मत पीबे बटलके शराब ला।
मत पीबे बटलके शराब ला।

शोषण से मुक्ति के लिए आंदोलन कर रहे मनुष्यों को उनके पुरखों की लड़ाई के इतिहास, बलिदान के इतिहास से प्रेरणा मिलती है। छत्तीसगढ़ के पहले शहीद थे नारायण सिंह। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ किसान विद्रोह के वे नेता थे। अंग्रेज शासकों ने तो उसके बाद नारायण सिंह को डकैत करार देकर सत्ताधारियों ने उन्हें भुलाकर उनकी बलिदानी को अंधियारे में डुबो दिया था। अंधियारे में डुबो दिया था। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने वीर नारायण सिंह की कहानी जनता के सामने लाने का काम किया। इस कहानी को जनता की समझ के लायक बनाकर छत्तीसगढ़ के गांव गांव तक पहुंचाने का काम किया मजदूर कवि फागुराम ने।

मध्यप्रदेश के दक्षिण और पूरब के सात जिलों को लेकर छत्तीसगढ़ बना है। छत्तीसगढ़ की जमीन इतनी उपजाऊ है कि इसे धान का कटोरा कहा जाता है। यहां वन संपदा विपुल है तो अकूत है खनिज भंडार। फिर भी गांव गांव में बेरोजगारी और अकाल, खेत सींचने को पानी नहीं। जंगल पर आदिवासियों का जन्मसिद्ध अधिकार खत्म है। छत्तीसगढ़ के उद्योग धंधों में छत्तीसगढ़ी जनता को काम नहीं मिलता है। मजदूर कवि फागुराम ने एक तरफ जैसे छत्तीसगढ़ के दुःख, वंचना की कथा सुनायी है तो दूसरी ओर आजाद छत्तीसगढ़ का आह्वान भी किया हैः

जनसंगठन, जन आंदोलन, जनयुद्ध के रास्ता मा आघु बढ़ो,
छत्तीसगढ़ की मुक्ति के खातिर, संगी कोई जतन करो।
छत्तीसगढ़ के वीर बहादुर यही बात बतायेगा,

किसान अउ मजदूर संगबारी के खातिर कहायेगा,
ये भुइयां के हम सब बेटा ये माटी के रक्षा करो।
छत्तीसगढ़ की मुक्ति के खातिर..
ये भुइयां के मालिक आगे इहां के मजदूर किसान हा गा।
तेकर बेटा सरहद मा लड़ते हे, देश के जही जवान ये गा।
अत्याचार शोषण ला भगाबो कदम कदम सब बढ़ते चलो।
छत्तीसगढ़ की मुक्ति के खातिर..

(भावार्थः जन संगठन, जन आंदोलन, जन युद्ध के रास्ते पर आगे बढ़ो। छत्तीसगढ़ को आजाद करने की कोशिश करो। इसी माटी की संतानें हैं हम, इस माटी की रक्षा करेंगे। इस माटी के मालिक इस देश के मजदूर किसान, इनके बेटे नौजवान। सरहद पर वे जवान हैं। अत्याचार शोषण दूर करने को कदम कदम आगे बढ़ो।)

लाल हरे झंडे का सबसे बड़ा किसान आंदोलन राजनांदगांव जिले के नादिया गांव में हुआ। सौ साल से भी पहले नादिया के गांव वालों ने अकाल के मुकाबले के लिए एक सामूहिक कोष का गठन कर लिया था। वे कबीरपंथी थे, इसलिए वे कबीर मठ के नाम संपत्ति इकट्ठी करते रहे। यह संपदा वक्त के साथ साथ बढ़ती रही। बाद में उत्तर प्रदेश से पधारे एक महंत ने उस संपत्ति पर कब्जा कर लिया। बहरहाल, गांववालों ने महंत के कब्जे से भूसंपत्ति छुड़ाने में कामयाबी हासिल कर ली और उन्होंने उसपर सार्वजनीन अधिकार बहाल कर दिया। इस आंदोलन में गांववालों को दमन उत्पीड़न का भी मुकाबला करना पड़ा। उस वक्त फागु ने गायाः'अत्याचार का बदला लो। '

छत्तीसगढ़ में पहला उद्योग राजनांदगांव शहर में बेंगल काटन मिल्स है। इस कारखाने में मजदूर आंदोलन का इतिहास भी पुराना है। सन् 1920 में कारखाने के मजदूरों ने 37 दिन लंबी चली हड़ताल की थी। फिर 1923 में पुलिस की गोली से जरहू गोंड शहीद हो गये। 1948 में ज्वाला प्रसाद और रामदयाल। 1984 में बीएनसी मिल्स में लाल हरा यूनियन का गठन हुआ। मजदूरों ने बेहतर काम के माहौल के लिए आंदोलन किया। शहीद हो गये जगत, राधे, मेहंतर और घनाराम। फागुराम के गीत में अतीत और वर्तमान के संघर्षों की कहानियों का ब्यौरा है।

विकास के नाम उद्योगों में मशीनें लगाकर मजदूरों की छंटनी करना मालिकान की नीति है। सरकार ने दल्ली राजहरा की लोहा खदान में मशीनें लगाने की योजना बना ली। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने 1978 में आंदोलन करके 1994 तक मशीनीकरण रोक दिया था। इस आंदोलन को लेकर फागुराम का गीत हैः

आगे मशीनीकरण के राज, जुच्छा कर देही सबके हाथ,
जागो मजदूर किसान हो।

बेरोजगारी हे अइसे बाढ़े हे, अउ आघु बढ़ जाही रे,
मेहनतकश जनता हा, बिन मौत मारे जाही रे,
फिर होही अनर्थ बात, सब पीटत रबो माथ।
जागो मजूर किसान हो।
आये विदेशी मशीन संगी, देश मा डेरा जमावत हे,
इहां के कमाइया मनके, हाथ ले काम नंगावत हे,
येमे भिड़े हाबे दलाल, होवत हाबे मालामाल,
जागो मजदूर किसान हो।

(भावार्थः मशीनीकरण राज आया है। सबके हाथों से काम छीनने के लिए। जागो मजदूर, किसान हो। बेकारी तो है ही, आगे और बेकारी बढ़ने वाली है। मेनतकश लोग मारे जायेंगे। तब सर कूटने से कोई फायदा नहीं होगा, जागो मजदूर किसान हो। देश की माटी पर डेरा बांधने लगी विदेशी मशीनें, देशी मजदूरों के काम छीनने को। होशियार हो जाओ, आवाज बुलंद कर लो, जागो मजदूर किसान हो।)

छत्तीसगढ़ आंदोलन की सबसे बड़ी लड़ाइयों में भिलाई मजदूर आंदोलन खास है। 1990 से शुरू इस आंदोलन के तहत भिलाई इंडस्ट्रीयल एरिया के तीस कारखानों में यूनियन बन गयी। संगठित होकर मजदूरों ने अपने हक हकूक और बेहतर जिंदगी जीने के लिए बेहतर पगार की मांगें लेकर आंदोलन शुरू कर दिया। जाहिर है कि आंदोलन को तोड़ने के लिए मजदूरों को काम से बर्खास्त करने, गुंडा पुलिस के जरिये हमले करने, नियोगी को जेल में कैद करने, सात जिलों में से पांच में नियोगी के प्रवेश पर रोक लगाने, आखिरकार 28 सितंबर, 1991 को गुप्त घातक के हाथों नियोगी की हत्या कर देने और 1 जुलाई, 1992 को पुलिस की गोली से सोलह मेहनतकश इंसानों की हत्या करने जैसी वारदातें हुईं। इस दौरान मेहनतकश संस्कृतिकर्मियों की अगुवाई मजदूर कवि फागुराम कर रहे थे।

कामरेड गुहानियोगी के प्रति उनकी श्रद्धांजलि- 'शंकर गुहा नियोगी ला भइया करथों मेहा लाल सलाम'। छत्तीसगढ़ी भाषा में लिखी यह लंबी गीतिकविता www.sanhati.com पर छत्तीसगढ़ आर्काइव में उपलब्ध है।

मैंने फागुराम के कुछ गीतों के सिर्फ उदाहरण पेश करने की कोशिश की है। छत्तीसगढ़ी भाषा, लोकसंगीत के सुर में फागुराम की खुली आवाज में न सुनें तो इन गीतों का कोई मजा मिजाज नहीं है। 1992 में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की पहल पर जन संगीत शिल्पी विपुल चक्रवर्ती के तत्वावधान में कोलकाता में फागुराम के आठ गीतों को रिकार्ड किया गया। कैसेट 'लाल हरा झंडा हमर' शीर्षक से निकला था। वह कैसेट अब मिलता नहीं है। फागुराम की मृत्यु के बाद विपुलदा उन गीतों को फेसबुक पर पोस्ट करने, उनका सीडी निकालने की कोशिश में हैं।

इस आलेख को पूरा करने से पहले फागुराम के बारे में कुछ न लिखा जाये तो यह आलेख अधूरा रहा जायेगा। जब मैं छत्तीसगढ़ में था, उस दौर में मैंने फागुराम को एकदम नजदीक से आठ सालों तक देखा है। हर रोज सुबह फटा हुआ हाफ पैंट और लाल हो गयी गंजी पहनकर उनका खदान चले जाना, फिर लौटकर घर का काम या यूनियन का काम करते रहना देखा है। श्रमिक संघ के राजनैतिक दृष्टिसंपन्न मजदूर कार्यकर्ताओं में फागुराम खास थे। उनका कला भंडार विशाल था। इसके बावजूद उनमें न कोई दंभ था और न अहंकार। फागु के सहकर्मियों से मैंने बात की है। फागु अपने इलाके के दो सौ मजदूरों के चुने हुए प्रतिनिधि थे यूनियन में। सभी एक सुर में कहते थे, बाहैसियत मनुष्य अपूर्व मानवीय गुणों के अधिकारी थे फागु। फिर भी फागुराम फागुराम बन नहीं सकते थे, अगर दल्ली राजहरा में जंगी मजदूर आंदोलन की धारा बह नहीं रही होती और सही सांगठनिक नेतृत्व नहीं होता। कामरेड नियोगी की देखरेख में कैसे वे निखरते रहे, वह कुछ मैंने खुद देखा है, बाकी सुना है।

भिलाई शहीद दिवस

असीम दास
इंद्रदेव चौधरी
किशोरी चौधरी
कुमार वर्मा
केएन प्रदीप कुट्टी
केशव प्रसाद गुप्ता
जोगा यादव
धीरपाल सिंह
पुराणिक पाल
प्रेम नारायण
मधुकर चौधरी
मनोहरण वर्मा
रामकृपाल मिश्र
रामाज्ञा चौहान
लक्ष्मण वर्मा
हीरु राम

तुम्हारी
जिन कसाइयों ने हत्या की है
आज की
अदालत में उनका फैसला होगा।
हम तुम्हारी
हत्या के मुकदमे में न्याय
करने का

हक हत्यारों को नहीं देंगे।
हम लड़ेंगे, हम जूझेंगे,
हम जीतेंगे,
हमारी अदालत
हत्यारों को सुनायेगी
सजा ए मौत।

(दल्ली राजहरा शहीद स्तंभ से)

गोलीकांड

पहली जुलाई, 1992 को भिलाई, उरला, टेढ़ेसरा, कुम्हारी के आंदोलनकारी मजदूर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष जनक लाल ठाकुर के निर्देश पर सेक्टर एक मैदान का धरनास्थल छोड़कर भिलाई पावर हाउस स्टेशन की तरफ बढ़ चले। जब वे रेल लाइन के पास पहुंचे, तब दोनों तरफ से दो ट्रेंने आ रही थीं। दोनों ट्रेनों को बिना बाधा जाने देने के बाद मजदूरों ने रेल पटरियों पर धरना शुरू कर दिया। बार बार त्रिपक्षीय वार्ता नाकाम होने और 30 जून 1992 को त्रिपक्षीय बैठक में मालिक पक्ष की गैरमौजूदगी के मद्देनजर मजदूरों ने अपनी नौ सूत्री मांगों के समर्थन में यह धरना शुरू कर दिया।

शांतिपूर्ण तरीके से रेल पटरियों पर बैठे मजदूर नारे लगा रहे थे, जन गीत गा रहे थे। दोपहर एक बजे के करीब विशाल पुलिस वाहिनी आ गयी। अफसरों ने रेल पटरियों को खाली करने के लिए कहा। मजदूर अडिग थे। उनकी मांगें बहुत मामूली थीं। फरवरी, 1992 में जिलाधीश, पुलिस अधीक्षक और डिवीजनल कमिश्नर की मौजूदगी में समझौता का जो मसविदा तैयार हुआ था, उस मसविदे के मुताबिक नौकरी से हटाये गये मजदूरों को दो दफा में बहाल करने का वायदा था। मजदूर उस समझौते पर मालिकान के दस्तखत के बाद रेल पटरिया खाली कर देने को तैयार थे।

शाम चार बजे के करीब पुलिस वाहिनी ने चारों तरफ से प्रदर्शनकारियों को घेर कर आंसू गैस के गोले छोड़ना चालू कर दिया। इस पर भी मजदूर नहीं हटे तो पुलिस ने लाठीचार्ज और पथराव शुरू कर दिया। आत्मरक्षा की खातिर मजदूरों ने भी जबावी पथराव कर दिया। दर्शकों ने भी नाराज होकर पुलिस पर हमला बोल दिया। शाम छह बजे के बाद गोली चल गयी।

पुलिस फायरिंग में पंद्रह मजदूर शहीद हो गये। जिनमें ग्यारह छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के सदस्य थे तो बाकी चार नहीं थे। (18 जनवरी, 1993 को ऑपरेशन के दौरान दम तोड़ देने से गोली से जख्मी धीरपाल सोलहवां शहीद हो गये।) जख्मी हो गये सौ से ज्यादा स्त्री पुरुष बच्चे। उस दिन की हिंसा में एक पुलिस सब इंस्पेक्टर की जान भी चली गयी थी।

गोलीकांड की पृष्ठभूमि

1990 के सितंबर महीने में भिलाई में मजदूर आंदोलन शुरू हो गया था। यह आंदोलन सिर्फ दुर्ग जिले के भिलाई में नहीं बल्कि राजनांदगांव जिले के रिवागहन, टेढ़ेसरा, दुर्ग जिले के दुर्ग, भिलाई, कुम्हारी, रायपुर जिले के उरला, महासमुंद, बालोदाबाजार तक फैल गया था ।

दलाल यूनियनों (किसी कारखाने में एटक तो कहीं इंटक तो फिर कहीं सीटू) छोड़कर कारखानों के मजदूरों ने प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ, प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ, छत्तीसगढ़ केमिकल मिल्स मजदूर संघ जैसे नये संगठन बनाने शुरू कर दिये। कारखाना की सीमा तोड़कर आंदोलन इंजीनियरिंग, डिस्टलरी, कैमिकल और सीमेंट उद्योग तक व्याप्त हो गया। सिर्फ भिलाई में ही बत्तीस कारखानों में यूनियन बन गयी।

मजदूरों ने जो नौ सूत्री मांगें उठायीं, उनमें खास थींः

1. स्थाई कारखाने में स्थाई नौकरी (ऐसे सभी कारखानों में नब्बे फीसद से ज्यादा ठेका मजदूर थे),
2. जिंदा रहने लायक पगार,
3. मजदूर यूनियन के सदस्य होने की वजह बताकर जिन मजदूरों को निकाला गया, काम पर फिर उनकी बहाली की मांग (यानी संगठित होने का हक)।

सत्ता वर्ग का हमला

आपात दृष्टि से ये मांगें मामूली हैं। देश के श्रम कानून के मुताबिक। तब भी सत्ता वर्ग इन मांगों का महत्व समझ गया। छत्तीसगढ़ खनिज संपदा, वन संपदा और जल संसाधनों से भरपूर है। इसके अलावा छत्तीसगढ़ी सीधा सादा इंसान सस्ते श्रम का खजाना है मुनाफे के लालच में यह इलाका देशी विदेशी उद्योगपतियों का आखेटगाह बन गया है। हमेशा नये उद्योग लगते जाते रहे हैं।

ऐसे हालात में छत्तीसगढ़ के सबसे बड़े औद्योगिक क्षेत्र में मजदूरों की स्थाई नौकरी, पर्याप्त वेतन और संगठित होने के हक मान लेने का सीधा मतलब था सस्ता श्रम के उत्स का बंजर हो जाना। इसीलिए जैसे एक तरफ मजदूर कारखानों की सीमा तोड़कर संगठित होने लगे तो दूसरी तरफ मालिकान भी इलाकावार इंडस्ट्रीयल एसोसिएशन के मार्फत संगठित हो गये। किसी कारखाने के हड़ताल से प्रभावित हो जाने की स्थिति में उस कारखाने के हिस्से के आर्डर की सप्लाई दूसरे कारखाने से की जाने लगी। इसके साथ साथ पुलिस प्रशासन, राज्य और केंद्र सरकारें और सत्ता वर्ग के लगभग सभी राजनैतिक दल मालिकान के पक्ष में मोर्चाबंद हो गये। पुलिस और

गुंडावाहिनी की दहशतगर्दी, झूठे मुकदमों में मजदूरों को जेल में बंद करने के अलावा करीब 4200 श्रमिकों को काम से निकाल दिया गया। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के हृदय सम्राट शंकर गुहा नियोगी को दो महीने तक जेल में कैद रखा गया। हाइकोर्ट में अर्जी लगाने पर उन्हें जमानत मिल गयी और उसके साथ ही उन्हें छत्तीसगढ़ के पांच जिलों से जिलाबदर करने की प्रक्रिया शुरू हो गयी। हाईकोर्ट के हस्तक्षेप से यह प्रक्रिया बाधित हो गयी तो 28 सितंबर 1991 को मालिकान के सुपारी किलरों ने नियोगी की हत्या कर दी।

नियोगी की हत्या के बाद

वर्ग संघर्ष में कामरेड नियोगी की शहादत के बाद संगठन और आंदोलन की कमान एक नौ सदस्यीय केंद्रीय समिति ने संभाल ली। इस समिति में पांच मजदूर नेता, एक युवा नेता और तीन बुद्धिजीवी शामिल थे।

मैं खुद उस समिति का एक सदस्य था। इसके बावजूद मैं मानता हूं कि जो दूरदर्शिता, मजदूर वर्ग की वैश्विक दृष्टि ने नियोगी को एक कामयाब जनांदोलन का नेता बना दिया था, परवर्ती नेताओं में उस आस्था और दूरदर्शिता का अभाव था।

नियोगी की हत्या के बाद देशभर में जन समर्थन की लहरें पैदा हो गयीं। नियोगी की हत्या के बाद मजदूरों ने स्वतःस्फूर्त हड़ताल कर दी थी। सात दिनों बाद नेतृत्व के आदेश से वह हड़ताल वापस ले ली गयी। बदले में जमायत, सभा, जुलूस, अनशन, जेल भरो, इत्यादि प्रचारमुखी कार्यक्रमों का सिलसिला चला।

लेकिन मजूदर आंदोलन तेज करना चाहते थे। इसके नतीजतन बीच बीच में आंदोलन के कार्यक्रम का ऐलान किया जाता रहा। मसलन 15 नवंबर को मालिकान के आवासस्थल नेहरु नगर का घेराव, 20 नवंबर को अनिश्चितकालीन जेल भरो, 26 दिसंबर को मुरली मनोहर जोशी की एकता यात्रा रोको या 26 जनवरी, 1993 को डायरेक्ट एक्शन। किंतु मजदूरों के आंदोलन के लिए हमेशा तैयार रहने के बावजूद बार बार नेताओं ने प्रशासन के वायदे के भरोसे कार्यक्रम वापस लेना जारी रखा।

महासंग्राम

नेतृत्व जब किंकर्तव्यविमूढ़ था और हताशा में मजदूर जब आत्मघाती कोई कदम उठाने की सोचने लगे थे, तभी एक नया कार्यक्रम शुरू हो गया। इस कार्यक्रम की दिशा कामरेड नियोगी ने रायपुर में 1990 में अपने दिये एक भाषण में तय कर दी

थी, जिसे छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के एक सहयोगी मित्र ने वक्त के तकाजा के मुताबिक नये रूप में पेश कर दिया।

शीर्ष नेतृत्व, मजदूर नेताओं और मजदूरों ने इस कार्यक्रम पर चर्चा की। मजदूरों ने अहसास कर लिया कि सिर्फ मजदूर वर्ग की ताकत से भिलाई आंदोलन में जीत हासिल करना संभव नहीं है। बल्कि सभी मित्र शक्तियों को संगठित करने की जरूरत है। क्योंकि भिलाई का आंदोलन छत्तीसगढ़ की मेहनतकश आम जनता के लिए बेहद खास था। लोकतांत्रिक पद्धति से फैसला हुआ कि मजदूर किसान युवा बुद्धिजीवी सबको साथ लेकर कुल पांच लाख लोग भिलाई में जमावड़ा करके भिलाई का अवरोध कर दें। रास्ता, रेल लाइन, आफिस कचहरी, कारखाना सबकुछ स्तब्ध तब तक कर दिया जाय, जबतक मांगें पूरी नहीं की जातीं।

व्यापक तैयारी के बाद 28 मार्च को पच्चीस तीस मजदूरों की 29 प्रचार टोलियां पोस्टर, बैज, पर्चे के साथ प्रचार अभियान के लिए निकल पड़ीं। 15 दिनों में इन लोगों ने पांच जिलों के करीब चार हजार गांवों में प्रचार चलाया। हजारों-हजार ग्रामीण लोगों, औद्योगिक इलाकों के मजदूरों ने भिलाई अवरोध के लिए बतौर स्वयंसेवक अपना नाम दर्ज कराया। अब भिलाई मजदूर आंदोलन छत्तीसगढ़ के जनमुखी विकास का आंदोलन बन गया था। (जिन लोगों ने बंगाल में कनोड़िया में 28 फरवरी का संग्राम देखा है, उनकी भिलाई महासंग्राम के बारे में कुछ धारणा बन सकती है। क्योंकि दोनों कार्यक्रमों की दिशा एक रही है।) 25 मई 1992 भिलाई अवरोध की तारीख तय हो गयी।

अवरोध कार्यक्रम वापस

मजदूरों ने व्यापक पैमाने पर संवाद चर्चा के मार्फत जो अवरोध का कार्यक्रम तय किया, वह व्यापक पैमाने पर प्रचार अभियान के जरिये जनता का कार्यक्रम बन गया। सिर्फ छत्तीसगढ़ी जनता ही नहीं, दूसरे राज्यों के देशप्रेमी और लोकतांत्रिक लोगों ने भी लाखों रुपये जमा करके संग्रामी कोष तैयार कर लिया।

इसी बीच जिन जिन स्थानों से स्वेच्छासेवकों को आना था, उन सभी स्थानों पर भारी संख्या में पुलिस तैनात करके नाकाबंदी कर दी गयी। दहशतगर्दी भी चालू हो गयी। फिर मीठी बातों के बुलेट दागने के लिए मैदान में हाजिर हो गये तत्कालीन उद्योग मंत्री कैलाश जोशी। कैलाश जोशी ने वादा कर दिया कि अविलंब मजदूरों की समस्याएं सुलझा ली जायेंगी। इस वादे पर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के दो प्रधान नेताओं ने अवरोध कार्यक्रम वापस लेने का ऐलान कर दिया। हालांकि केंद्रीय समिति के दूसरे सदस्य और आम मजदूर कार्यक्रम वापस लेने के खिलाफ थे।

25 मई

अवरोध कार्यक्रम वापस लेने की घोषणा के बावजूद उस दिन भिलाई में पचास हजार मजदूर किसान जमा हो गये। देश के विभिन्न हिस्सों से अनेक नेता समर्थक हाजिर हो गये। अवरोध की तारीख तय करते हुए किसी को ख्याल नहीं था कि 25 मई, 1992 को नक्सलबाड़ी जन विद्रोह की रजत जयंती थी। बाकी देश की तरह भिलाई में भी सीपीएमएल के एक गुट ने पोस्टर लगा दिये।

25 मई को जुलूस निकालने पर उसमें नक्सली घुसकर हिंसा के लिए जनता को उकसा सकते हैं, इस आशंका की वजह से पचास हजार जनता के जमावड़े के बावजूद जुलूस निकालकर शक्ति प्रदर्शन किया नहीं जा सका। ढीले ढाले ढंग से बहरहाल एक सभा कर ली गयी। मजदूर हताश जरूर थे, लेकिन एक जगह वे अडिग थे कि इतनी लंबी लड़ाई, इतनी व्यापक तैयारी के बाद मांगें पूरी न होने तक वे घर लौटने को तैयार नहीं थे। सपरिवार करीब पांच हजार मजदूरों ने जामुल रावनभाटा मैदान में धरना शुरू कर दिया।

त्रिपक्षी वार्ता नाकाम

मजदूरों की सबसे अहम मांग यूनियन के सदस्य होने की वजह से काम से हटाये गये श्रमिकों की बहाली की थी। इस मांग को लेकर दुर्ग और रायपुर में कई दफा बैठकें हुईं। आखिरी बैठक मध्य प्रदेश के श्रम विभाग के मुख्यालय इंदौर में हुई। भिलाई अवरोध के मद्देनजर काम से निकाले गये मजदूरों को दो चरणों में फिर काम पर वापस लेने की बात मालिकान कहते रहे, लेकिन इंदौर की बैठक में उनका सुर बदल गया। कुल 4200 निकाले गये मजदूरों में सिर्फ 500 को वे 'मानवीय आधार' पर 'वैकल्पिक रोजगार' देने को तैयार हो गये। श्रमिकों के प्रतिनिधियों ने जाहिर है कि घृणा के साथ यह पेशकश नामंजूर कर दी।

इधर भिलाई में मजदूर धरनास्थल बदलते रहे। जामुल रावणभाटा से शारदा पाड़ा वैकुंठ नगर, वहां से छावनी, छावनी से रेलवे लाइन के ठीक बगल में सेक्टर एक में मजदूरों ने धरना लगातार जारी रखा। एक के बाद एक दिन बीतते रहे और मई जून में चल रही लू, बीच बीच में तेज आंधी पानी से बेपरवाह मजदूर खुले आसमान के नीचे धरने पर बैठे हुए थे।

त्रिपाक्षिक बैठक में नाकामी की वजह से हताशा फैलने लगी और धरने में शामिल मजदूर घटते रहे। दूसरी तरफ रोजाना करीब बीस बीस हजार रुपये खर्च होते रहने से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का कोष खत्म होने को हो गया। लेकिन वहां रह गये मजदूर बिना मांग पूरी हुए किसी सूरत में घर वापस जाने को तैयार नहीं थे।

इन्ही परिस्थितियों में 29 जून को भिलाई वर्कर्स के साथ बैठक नाकाम हो गयी।

30 जून को श्रम विभाग की बुलाई बैठक में मालिकों के प्रतिनिधि गैरहाजिर रहे। फिर तीस जून की रात नेताओं ने रेल अवरोध का फैसला किया।

पहली जुलाई को कामरेड शंकर गुहा नियोगी के नक्शेकदम पर पंद्रह श्रमिकों ने महान शहादतें दे दीं। कामरेड केशव प्रसाद गुप्ता ने इस आंदालन की अगुवाई की। वे छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के इस दौर के भिलाई के पहले संगठन एससीसी ठेका ट्रांसपोर्ट मजदूरों के संगठन 'प्रगतिशील ट्रांसपोर्ट श्रमिक संघ' के नेता थे।

गोलीकांड के बाद

गोलीकांड के बाद सत्ता वर्ग का श्वेत संत्रास तेज हो गया। हफ्तेभर कर्फ्यू लागू रहा। ढाई महीने तक 144 धारा जारी रही। केंद्रीय समिति के दो चिकित्सक सदस्यों को छोड़कर बाकी नेता भूमिगत हो जाने के लिए मजबूर हो गये। नाना प्रकार के मुकदमों में सौ से ज्यादा मजदूर और उनके नेता गिरफ्तार कर लिये गये। जिनमें केंद्रीय समिति के तीन सदस्य भी शामिल थे। तीन श्रमिक नेताओं को सब इंस्पेक्टर की हत्या के झूठे मामले में बिना न्याय के अठारह महीने तक कैद रखा गया।

मजदूरों ने लेकिन स्वतः स्फूर्त तरीके से कारखानों में करीब हफ्तेभर हड़ताल जारी रखी। नेतृत्व के निर्देश पर वह हड़ताल वापस ले ली गयी। बहुत जल्दी दूसरे दर्जे के नेताओं ने लोकतांत्रिक पद्धति से फैसला लेने वाली समिति बनाकर भिलाई में संगठन की कमान संभाल ली। उन्हीं के प्रयास से 15 जुलाई को 144 धारा तोड़कर एक सर्वदलीय आम सभा में दस हजार से ज्यादा लोग जमा हो गये। 3 सितंबर को भोपाल में प्रदर्शन प्रदर्शन जमावड़ा हो गया। 15 सितंबर को प्रशासन को 144 धारा वापस लेने को मजबूर कर दिया गया। 28 सितंबर को नियोगी के जन्मदिन पर 'पशुशक्ति के खिलाफ जनशक्ति' का विशाल प्रदर्शन भी हुआ।

डांवाडोल नेतृत्व

25 मई को जो डांवाडोल हालत प्रकट हो गयी थी, वह गोलीकांड के बाद और तेज हो गयी। अब वर्ग संघर्ष के बजाय नेताओं का झुकाव बातचीत के जरिये समस्या समाधान की ओर हो गया। मजदूरों ने आंदोलन के लिए दबाव बढ़ाना शुरू कर दिया तो नेतृत्व का प्रभावशाली अंश ने उन्हें श्वेत संत्रास तेज होने का डर दिखा कर काबू में रखने की कोशिशें शुरू कर दीं। संगठन में लोकतंत्र बनाम अफसरशाही का वैचारिक संघर्ष भी शुरू हो गया। आखिरकार गोली कांड के दो साल भीतर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा टूट गया। वह अलग कहानी है। शहीद दिवस को स्मरण करते हुए वह कथा बांचने का मौका नहीं है।

भिलाई गोलीकांड टाला जा सकता था

भिलाई के शहीदों के महान आत्म बलिदान का पूरा सम्मान करते हुए मुझे कहना है कि मनुष्य का जीवन अमूल्य है। बेहद जरूरी न हो तो मनुष्य को मौत के मुंह में धकेलना सही नहीं है।

25 मई के लिए जो तैयारी थी, उस तैयारी के साथ रेल अवरोध करते तो पुलिस को बंदूक उठाने को कोई मौका नहीं मिलता। प्रस्तावित पांच लाख लोगों के जमावड़े की बात छोड़ भी दें तो जो पचास हजार लोग 25 मई को आ गये थे, उनकी संख्या भी बिना खून खराबे के जीत हासिल करने के लिए काफी थी। 25 मई के बाद जब त्रिपाक्षिक बैठकें फेल होती रहीं, तब दूसरे दर्जे के नेताओं ने साफ साफ राय दी कि फिर गांवों में वापस लौटकर पहले ताकत बटोरने के बाद ही भिलाई में कोई बड़ा कार्यक्रम किया जाये। प्रधान नेताओं ने तरह तरह के बहाने बनाकर इस प्रस्ताव पर अमल नहीं किया।

हकीकत में हालात मजदूरों के हक में नहीं थे, फिर भी रेल रोकने की तारीख तय करने के लिए छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का कोष खत्म होने के कगार पर पहुंचने की वजह से नेतृत्व राजी हुआ।

रेल अवरोध शुरू होने के बाद भी गोलीकांड टाला जा सकता था बशर्ते कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की तमाम शाखाओं ने एक साथ अपने अपने इलाके में रेल अवरोध शुरू कर दिया होता। तब पुलिस पूरी ताकत के साथ भिलाई में जमा होकर दमन का रास्ता अख्तियार नहीं कर सकती थी। गौरतलब है कि दल्ली राजहरा को छोड़कर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के तमाम प्रधान केंद्र महाराष्ट्र की सीमा पर चांदी डुंगरी से लेकर राजनांदगांव, टेढ़ेसरा, दुर्ग, भिलाई, पुरैना, कुम्हारी, उरला, रायपुर, बालोदा बाजार, हिरी, चांपा, बारदुआर रेल लाइन के पास थे। हर कहीं स्थानीय संगठकों को नेतृत्व के निर्देश का इंतजार था।

गोली कांड के बाद जो करना चाहिए था

कहीं और जाकर सीखने की जरूरत नहीं थी। सबसे पास छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के पहले संगठन की अभिज्ञता ही पर्याप्त थी। 2-3 जून, 1977 को नियोगी की गिरफ्तारी के विरोध में प्रदर्शन कर रहे मजदूरों पर गोली चलने से दल्ली राजहरा के ग्यारह श्रमिक शहीद हो गये थे। उसके बाद खदान मजदूर लगातार 19 दिनों तक हड़ताल जारी रखकर नियोगी को जेल से छुड़ा लाये और उन्होंने अपनी तमाम मांगें भी पूरी करवा लीं। वैसा भिलाई में भी किया जा सकता था। गौरतलब है कि मजदूरों ने भिलाई में भी स्वतःस्फूर्त तरीके से सात दिनों तक हड़ताल जारी रखी थी।

सकारात्मक सबक

1. भिलाई आंदोलन हमारे लिए सबक है कि कैसे वर्ग संघर्ष की आंच से तप कर मजदूर इस्पात में तब्दील हो जाता है।
2. भिलाई आंदोलन मजदूर आंदोलन से दूसरी मित्र शक्तियों को जोड़ने का पाठ भी पढ़ाता है। इसके साथ ही हमें यह सीख भी मिलती है कि किसी एक मजदूर आंदोलन को एक बड़े क्षेत्र में जनता के आंदोलन में बदला जा सकता है।
3. भिलाई आंदोलन में कामयाबी हर बार तभी मिल सकी है, जबकि संगठन की लोकतांत्रिक पद्धति के मुताबिक कार्यक्रम का फैसला हुआ है। इससे सबक मिलता है कि जन संगठन में आंतरिक लोकतंत्र अपरिहार्य है।
4. नियोगी की शहादत और फायरिंग के बाद रेल पथ पर अडिग श्रमिक हमें साहसी होना सिखाता है।

नकारात्मक सबक

कुछ घटनाओं की चर्चा पहले ही की है।

1. इतना बड़ा आंदोलन नियोगी के बाद के नेतृत्व के डांवाडोल हो जाने की वजह से कमजोर हो गया। इसलिए वर्ग संघर्ष ही काफी नहीं है, इसके साथ ही श्रमिकों में राजनीतिक चेतना का विकास भी बहुत जरूरी है।
2. भिलाई आंदोलन से सबक मिलता है कि किसी भी सही मांग को पूरी करने के लिए वर्ग संघर्ष ही एकमात्र रास्ता है, वर्ग समझौता कतई नहीं।
3. हम सीखते हैं कि लोकतांत्रिक केंद्रिकता के बदले अफसरशाही के तौर तरीके अपनाने से संगठन और आंदोलन, दोनों की अकाल मृत्यु तय है।
4. सत्ता वर्ग के झूठे वायदों के झांसे में भूलना नहीं चाहिए, पहली जुलाई को शहीदों का खून यही सबक सिखाता है।
5. श्वेत संत्रास से आतंकित होकर आंदोलन न करना कोई सही रास्ता नहीं है, बल्कि लोकतांत्रिक आंदोलनों की लहरें पैदा करके श्वेत संत्रास का प्रतिरोध गोली कांड के बाद के दिनों की याद दिलाता है।
6. यह गोलीकांड सबक है कि पर्याप्त तैयारी के बिना सत्ता वर्ग से मुठभेड़ का मतलब खुदकशी है।

आखिरी बात

भिलाई में मजदूर आंदोलन लंबा खींचने (करीब पांच साल हो गये), नियोगी परवर्ती डांवाडोल नेतृत्व, संगठन के बिखराव से बेहद हताश हो गये हैं। कारखानों के

मालिकान ने उनका शोषण और तेज कर दिया है।

तो क्या शहीदों का खून बेकार चला जायेगा?

नहीं। शोषण के खिलाफ लड़ते हुए भिलाई के मजदूर फिर एकजुट हो जायेंगे। फिर वे लड़ाई के मैदान में कूद पड़ेंगे। तब उनकी पूंजी होगी कामरेड नियोगी की सीख, भिलाई आंदोलन के सकारात्मक और नकारात्मक सबक। तब वे अजेय होंगे और उनकी जीत जरूर होगी।

संघर्ष और निर्माण

28 सितंबर, 1991 से पहले छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश के बाहर कम लोगों ने ही शंकर गुहा नियोगी का नाम सुना होगा। उसी वक्त देश की जनता को नियोगी के साथ और दो शब्दों के बारे में जानकारी मिलीः 'संघर्ष और निर्माण'।

संघर्ष और निर्माण का मतलब क्या है? संघर्ष का मतलब समझ में आता है- लड़ाई। किंतु निर्माण का मतलब क्या है? इसी 'निर्माण' को लेकर कुछ लोगों ने नियोगी को संशोधनवादी होने का तमगा भी दिया है। तो कुछ लोगों ने नियोगी को 'छत्तीसगढ़ का गांधी' भी कहा है। कुछ लोग तो संघर्ष और निर्माण की विचारधारा में ग्राम्शी के विचारों का असर देखते हैं। (हालांकि हम जानते हैं कि ग्राम्शी का लिखा कुछ भी पढ़ने का मौका नियोगी को नहीं मिला। उनके विशाल पुस्तक संग्रह में ग्राम्शी की कोई पुस्तक खोजने पर हमें नहीं मिली।) बंगाल के नक्सली नेता अजीजुल हक छत्तीसगढ़ श्रमिक आंदोलन की प्रेरणा से बंगाल में कनोड़िया श्रमिक आंदोलन पर एक व्यंग्य उपन्यास (हाथी खोजे राजा) लिखा, जिसमें उन्होंने व्यंग्य के साथ बार बार उल्लेख किया है- 'संघर्ष और निर्माण'।

क्रांतिकारी कवि समीर राय ने लिखा हैः 'काफी लोग संघर्ष और निर्माण की विचारधारा समझ नहीं पाते या समझना नहीं चाहते।' उनके मुताबिक 'संघर्ष और निर्माण की विचारधारा समाज विज्ञान में नया अवदान है। 'मार्क्स- एंजेल्स- लेनिन-स्तालिन-माओ के बाद समाज विज्ञान में यह विचारधारा नई रोशनी की दिशा है।'

1989 में एक साक्षात्कार में नियोगी ने कहा हैः 'समाज व्यवस्था में परिवर्तन के लिए, हक हकूक की लड़ाई और छोटे छोटे निर्माण, जो नया विकल्प तैयार करने के क्षेत्र में नई चेतना पैदा करेंगे। हम इस पर परीक्षण निरीक्षण कर रहे हैं। किंतु याद रखना होगा कि शोषण आधारित जन विरोधी व्यवस्था बदलने का लक्ष्य लेकर ही हम संघर्ष और निर्माण की बातें कह रहे हैं।'

नियोगी मार्क्सवादी लेनिनवादी रहे हैं। उनके समकालीन श्रमिक नेता एके राय ने कहा है- 'देश में कम्युनिस्ट आंदोलन की तीन धाराओं (अर्थात सीपीआई,

सीपीआईएमएल, सीपीएमएल) के बीच से निकलकर शंकर गुहा नियोगी एक चौथी धारा बन गये थे समन्वय की धारा।' अतीत के तमाम प्रयोगों का सारांश चुनकर छत्तीसगढ़ की जमीन पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सृजनशील, समयोपयोगी, स्थानोपयोगी प्रयोग का प्रयास उन्होंने आजीवन किया।

रूस में नवंबर क्रांति के मध्य मजदूर वर्ग के राष्ट्र क्षमता दखल के चालीस साल बाद सोवियत यूनियन सामाजिक साम्राज्यवाद के रास्ते पर चलना शुरू किया। 1949 में चीन के शोषण मुक्त होने के बाद बीस साल भी नहीं बीते कि मजदूर वर्ग की पार्टी का विचलन देखते हुए माओ त्से तुंग को अपील करनी पड़ी- 'सदर दफ्तर पर तोप दागो', शुरू हो गयी सांस्कृतिक क्रांति। उन्हीं माओ की मृत्यु के बाद चीन भी सोवियत संघ के रास्ते पर चल पड़ा । ये सारी घटनाएं दूसरे सच्चे कम्युनिस्टों की तरह नियोगी को भी परेशान करती रहीं- तो सही रास्ता क्या है? खून के बदले क्रांति, मेहनती जनता के आत्म बलिदान के बदले में मिली सत्ता क्या बार बार शोषक वर्ग को हस्तांतरित होती रहेगी?

असल में शोषक वर्ग को ताकत के दम पर बेदखल करके राष्ट्र क्षमता दखल करना, अर्थनीति पर काबू पाना तुलनात्मक रूप में सरल है। इसके उलट चेतना परिवर्तन बहुत बहुत मुश्किल है। इसीलिए श्रमिक वर्ग की अग्रणी वाहिनी, कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के एक अंश, जनता के चुने हुए नुमाइंदों में पूंजीवादी वर्ग की विचारधारा हावी हो जाती है और श्रमिकों का राष्ट्र पथभ्रष्ट हो जाता है। इसके खिलाफ भी लगातार लड़ाई जारी रखनी होती है। माओ त्से तुंग ने कहा है-एक सांस्कृतिक क्रांति नहीं, समाजवादी व्यवस्था तक पहुंचने के लिए हजारों सांस्कृतिक क्रांतियों की जरूरत पड़ती है।

नियोगी की विचारधारा में नई बात यह है कि क्रांति के बाद सांस्कृतिक क्रांति होगी, इस अवधारणा से हटकर उन्होंने नये प्रयोग किये। पहले के नकारात्मक अनुभवों से सीख लेकर वे अर्थनीति बदल जाने से सांस्कृतिक बदलाव हो जायेगा, इस धारणा से बाहर निकल आये। लिहाजा उन्होंने वर्ग संघर्ष, समाज परिवर्तन की लड़ाई के साथ साथ सांस्कृतिक लड़ाई शुरू करने की अवधारणा पेश की। अर्थात लड़ाई की शुरुआत से ही सांस्कृतिक क्रांति की शुरुआत।

1977 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ बन जाने के कुछ ही दिनों के अंदर उन्होंने इस सिलसिले में परीक्षण निरीक्षण शुरू कर दिये। जो बतौर विचारधारा सूत्रबद्ध होकर संघर्ष और निर्माण की राजनीति के रूप में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के कार्यक्रम बतौर मंजूर हो गयी। नियोगी ने इसे लेकर निर्भूल विचारधारा का कोई दावा नहीं किया, बल्कि उन्होंने इसे एक परिकल्पना (hypothesis) के रूप में पेश किया।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नारा था- 'संघर्ष के लिए निर्माण, निर्माण के लिए

संघर्ष'। शोषण विहीन समाज के निर्माण का लक्ष्य हासिल करने के लिए निरंतर संघर्ष और उस संघर्ष के हित में निर्माण। क्रांति के बिना शोषण विहीन समाज की स्थापना नहीं होती। किंतु छोटे छोटे प्रयोगात्मक निर्माण के काम से शोषण विहीन समाज के एक एक छोटे अंश को रूप देने की कोशिश की जा सकती है, जिसे देखकर लोगों को परिवर्तन की लड़ाई में शामिल होने की प्रेरणा मिल सके।

दल्ली राजहरा की प्रयोगशाला में एक के बाद एक प्रयोग किये गयेः

- स्वास्थ्य आंदोलन कार्यक्रम के तहत शहीद अस्पताल, नये समाज में स्वास्थ्य व्यवस्था कैसी हो सकती है, चिकित्सा पद्धति में, स्वास्थ्य शिक्षा में, प्रतिष्ठान प्रबंधन में, सामाजिक आंदोलन के साथ संबंध में उसकी तस्वीरें पेश की गयीं।
- शिक्षा कार्यक्रमः श्रमिक संगठन के संचालन में छह प्राथमिक स्कूल और वयस्क शिक्षा।
- नई लोकतांत्रिक संस्कृति के प्रचार के लिए 'नया अंजोर' (सुबह की रोशनी)।
- नशे के शिकंजे में मेहनतकश जनता की चेतना को मुक्त करने के लिए शराबबंदी आंदोलन।
- खदानों में मशीनीकरण के खिलाफ अर्ध मशीनीकरण के विकल्प की स्थापना की लड़ाई। जिसके तहत भारत जैसी घनी आबादी वाले देश में मजदूरों की छंटनी किये बिना उत्पादन का परिमाण और गुणवत्ता बढ़ाने की दिशा खुलती है।
- वैकल्पिक पर्यावरण आंदोलन 'अपना जंगल पहचानो कार्यक्रम' शुरू किया गया। जिससे शोषण विहीन समाज की वन नीति कैसी होगी, इसकी धारणा बनती है।
- छत्तीसगढ़ में निर्माण कार्यों की विशेषताएं इस प्रकार हैंः
- जनसंघर्ष के जरिये वैकल्पिक धारणाओं को साकार रूप दिया गया।
- मेहनतकश जनता ने प्रत्यक्ष रूप में उन विकल्पों की स्थापना और उनका संचालन किया।
- बाहर के अनुदानों पर निर्भरता के बिना विकल्प तमाम प्रतिष्ठान चरणबद्ध तरीके से स्थानीय संसाधनों की नींव पर खड़े किये गये।
- श्रमिक वर्ग की पहल से स्थापित वैकल्पिक व्यवस्थाओं में दूसरे तमाम शोषित वर्ग के लोगों को जरूरी सेवाएं मुहैय्या करायी गयीं।
- इतने सारे विकल्पों को देखकर लोगों को नये नये जन संघर्षों की प्रेरणा मिलती रहती है। दूसरी तरफ जारी जनसंघर्षों से उनका घना संबंध बना रहता है।

- इन निर्माण कार्यों ने नई चेतना, नये मूल्यबोध के मनुष्य बनाने के कारखाना बतौर काम किया।

सवाल उठ ही सकता हैः वर्ग संघर्ष तेज होने की हालत में शोषक वर्ग राष्ट्र शक्ति की मदद से ऐसे तमाम निर्माण को तबाह कर सकता है। हां, ये प्रतिष्ठान जरूर ढहा दिये जा सकते हैं। किंतु वे मनुष्यों की लड़ाकू चेतना, नये मूल्यबोध का ध्वंस नहीं कर सकते।

अनेक लोगों की धारणा यही है कि क्रांति का मतलब शायद लड़ाई के बाद लड़ाई का सिलसिला है। सुधार के काम करने का मतलब संशोधनवादी हो जाना है। इसलिए शुद्धिकरणवादी सुधार कार्य और क्रांतिकारी सुधार कार्यों के बीच फर्क समझना जरूरी है। नियोगी इस बारे में सचेत थे। निर्माण के कामों में सबसे खास स्वास्थ्य कार्यक्रम का साल पूरा होने के बाद जो संवाद चर्चा हुई, उसका सारांश पेश है।

शुद्धिकरणवादी सुधारों का मकसद यही होता है कि शोषित पीड़ित जनता को कुछ सहूलियतें देकर वर्ग संघर्ष का दमन करना। इसके उलट क्रांतिकारी समाज सुधार का उद्देश्य वर्ग संघर्ष तेज करना है, शोषण आधारित व्यवस्था के खिलाफ आम जनता की घृणा को तीव्रतर बनाना है। सुधार इसका अंतिम लक्ष्य नहीं होता। क्रांतिकारी सुधार क्रांतिकारी राजनीतिक लड़ाई का हिस्सा बतौर काम करता है।

जन संघर्ष की मुख्य धारा से अलग थलग कुछ सुधारक शुद्धिकरणवादी सुधार अभियान चलाते हैं। क्रांतिकारी समाज सुधार का मूल उत्स श्रमिकों किसानों की राजनीतिक चेतना, संगठन की ताकत और रचनात्मकता है।

क्रांतिकारी समाज सुधारक अपने कार्यक्रम की अनिवार्य व्यर्थता के बारे में सजग होते हैं क्योंकि जिन सामाजिक समस्याओं के खिलाफ उनका यह कार्यक्रम होता है, उन समस्याओं की जड़ें मौजूदा समाज व्यवस्था में ही गहरी पैठी होती हैं। व्यवस्था बदले बिना किसी समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता।

समाजवादी किलों के एक के बाद ढहते जाने से दूसरे कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की तरह नियोगी हताश नहीं थे। दूसरों की तरह संकट की वजह खोज कर ही वे शांत नहीं हो गये, बल्कि संकट से मुकाबले का रास्ता खोजने में जुटे रहे। सामाजिक क्रांति के पूर्वज नेताओं की शिक्षा की रोशनी में, संघर्षों की अभिज्ञता के आधार पर संघर्ष और निर्माण को लेकर परीक्षण निरीक्षण वे करते रहे। वर्ग संघर्ष की शुरुआत से ही उन्होंने मेहनती आवाम की चेतना में बदलाव का संघर्ष शुरू करके नये मूल्यबोध के मनुष्यों का निर्माण करना चाहा नया समाज बनाने के लिए।

वर्ग संघर्ष में नियोगी के अकाल अवसान से संघर्ष और निर्माण के परीक्षण निरीक्षण को जरूर नुकसान हुआ है। किंतु हम जो लोग समाज को बदलने का ख्वाब

देखते हैं, नया समाज बनाने का जिनका इरादा है-उन्हें नियोगी की तरह व्यापक पैमाने पर न सही, इस अधूरे प्रयोग का सिलसिला आगे जारी रखने की जिम्मेदारी उठानी पड़ेगी।

(यह आलेख विसंवाद पत्रिका के प्रथम वर्ष, अंक सात, सितंबर अक्तूबर, 1995 में प्रकाशित हुआ था।)

किन लोगों ने शंकर गुहा नियोगी के सपनों के छत्तीसगढ़ आंदोलन को भटका दिया?

श्रमिक आंदोलन के अग्रणी शंकर गुहा नियोगी ने साठ के दशक में छत्तीसगढ़ में काम शुरू करने के बाद 1991 में शहादत तक अनगिनत वर्ग संघर्षों का नेतृत्व किया है। श्रमिक आंदोलन की एक नई धारा के वे भागीरथ थे। इस धारा के तहत सिर्फ श्रमिक जीवन के आठ घंटे अर्थात वेतन वृद्धि, बोनस या चार्जशीट के जबाव तक श्रमिक यूनियन सीमाबद्ध नहीं रही, बल्कि श्रमिक जीवन के सभी विषय (स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, संस्कृति, खेलकूद, शराबबंदी, नारी मुक्ति, समाज के दूसरे शोषित वर्गों के प्रति श्रमिक वर्ग के ऐतिहासिक उत्तरदायित्व) यूनियन के कार्यक्रम में थे। इन सारे कार्यक्रमों का लक्ष्य समाज परिवर्तन रहा है। मार्क्सवाद- लेनिनवाद- माओ त्से तुंग विचारधारा का छत्तीसगढ़ की जमीन पर रचनात्मक प्रयोग करने में उनकी भूमिका नायाब रही है। उन्होंने 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति को सूत्रबद्ध कर दिया, जो वैज्ञानिक समाजवाद की अवधारणा में उल्लेखनीय संयोजन है। राष्ट्रीयता के मुक्ति आंदोलन में श्रमिक वर्ग का नेतृत्व बहाल करके उसे समाज परिवर्तन के आंदोलन में समाहित करने की अवधारणा और प्रयोग के मामले में भी वे नायाब थे।

इसके बावजूद उनकी शहादत के बाद सिर्फ तीन साल के अंदर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नेतृत्व भटक गया। उन्हीं की विचारधारा को लेकर मतभेद के तहत छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा दो फाड़ हो गया और जिस आंदोलन में नियोगी और 16 श्रमिक वीरों ने शहादतें दीं, वह आंदोलन भी मरणासन्न है।

ऐसा कैसे हो गया, विसंवाद के मित्र यह जानना चाहते थे। 1992 से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में विचारधारा को लेकर जो तीव्र लड़ाई चल रही थी, उस लड़ाई में मैं एक लाइन का प्रवक्ता रहा हूं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा दो फाड़ होने के बाद एक धड़े (छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा नियोगीपंथी) का मैं प्रधान संगठक था। इस लिहाज से मुझसे ही ये सवाल पूछना कितना सही है, मैं नहीं जानता। क्योंकि निरपेक्ष किसी पत्रकार के नजरिये से लिखना तो मेरे लिए संभव नहीं है। हो सकता है कि अनिच्छा के बावजूद पक्षपात हो जाये। इसलिए बेहतर होगा कि इसके बाद कुछ और अंकों के

लिए छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के दूसरे कामरेडों को भी लिखने का न्यौता दिया जाये।

नियोगी की शहादत के बाद छत्तीसगढ़ आंदोलन को व्यापक जन समर्थन मिला। भिलाई, उरला, कुम्हारी, टेढ़ेसरा, दल्ली-राजहरा के मजदूर गुस्से में उफन रहे थे। मित्र शक्तियों की मदद से उस वक्त मजदूर पूंजीपतियों की चिमनियों का धुआं बंद करके मजदूरों के तमाम हक हकूक वसूल करने की हालत में थे। सरकार को हत्यारे पूंजीपतियों को सजा दिलाने के लिए मजबूर किया जा सकता था। किंतु अपने प्रधान नेता के अवसान के बाद किंकर्तव्यविमूढ़ तमाम नेता दिशाहीनता के शिकार हो गये। इसी वजह से सात दिनों की स्वतःस्फूर्त औद्योगिक हड़ताल अचानक वापस ले ली गयी। इसके बदले भूख हड़ताल, सभा, जुलूस, श्रीमती गुहा नियोगी का धरना, प्रतीकी एकदिन का जेल भरो आंदोलन वगैरह शुरू हो गया। प्रचार तो मिल रहा था, लेकिन पूंजीपतियों के खिलाफ दबाव बन नहीं रहा था।

यहां छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का सांगठनिक परिचय देना जरूरी है। 1990 में भिलाई आंदोलन शुरू होने से पहले लाल हरा झंडे का प्रधान कार्य क्षेत्र दल्ली राजहरा, दानीटोला, आरिडुंगरी, हिरी, बारदुआर, राजनांदगांव इलाकों में था। तब तक छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा मजदूर संगठनों का एक ढीला ढाला अंब्रेला संगठन था। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की किसी तरह की औपचारिक सदस्यता नहीं थी। लाल हरा यूनियनों के सदस्यों और ग्रामीण सक्रिय कार्यकर्ताओं को ही छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का सदस्य मान लिया जाता था। पदाधिकारी सिर्फ अध्यक्ष जनक लाल ठाकुर थे। हालांकि संगठन में लोकतांत्रिक पद्धति से फैसला करने पर खूब जोर दिया जाता रहा है। हर शाखा में लोकतांत्रिक पद्धति से फैसले होते थे। शाखाओं को साथ संपर्क बनाये रखते थे कामरेड नियोगी और उनके सहयोगी थे जनक लाल ठाकुर।

1990 में भिलाई आंदोलन के साथ साथ जब छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संगठन का व्यापक विस्तार होने लगा, तब सभी ने एक केंद्रीय समिति के गठन की जरूरत महसूस की। किंतु राष्ट्र शक्ति के एक के बाद एक हमले की वजह से यह मौका नहीं मिला। 1991 में अपनी हत्या का अंदेशा हो जाने के बाद नियोगी ने एक गोपनीय कैसेट में संगठन और आंदोलन के बारे में अपनी राय दर्ज करा लिया। उन्होंने नौ अग्रणी कामरेडों के नाम सुझाये जो उनके मुताबिक केंद्रीय समिति के लायक थेः जनक लाल, गणेश राम, नीलरतन घोषाल, फागुराम, भीमराव बागड़े (पांच श्रमिक नेता), शेख अंसार (युवा नेता), डॉ. शैबाल जाना, डॉ. पुण्यव्रत गुण और अनूप सिंह (तीन बुद्धिजीवी, जिनमें पहले दो शहीद अस्पताल के चिकित्सक)। इनके अलावा आंदोलन के अग्रणी श्रमिक कार्यकर्ताओं को लोकतांत्रिक पद्धति से चुनकर केंद्रीय समिति में शामिल करने की सलाह थी।

कैसेट सुनने के बाद मजदूरों ने आम सहमति से नौ सदस्यों की समिति का

अनुमोदन कर दिया। किंतु वास्तविक समस्याओं के कारण समिति पूरी तरह काम नहीं कर पा रही थी। शहीद अस्पताल में उस वक्त सिर्फ दो चिकित्सक थे, दोनों केंद्रीय समिति के सदस्य भी थे, इसलिए इनमें से किसी एक को ही संगठन के काम के लिए लगाया जा सकता था। दूसरी तरफ मैं तब एक और महत्वपूर्ण काम में लग गया था। मैंने नियोगी की विचारधारा के व्यापक प्रचार प्रसार के लिए छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की प्रकाशन संस्था लोक साहित्य परिषद के अंतर्गत 'शंकर गुहा नियोगी स्मृति रक्षा समिति' बना ली थी। नियोगी के तमाम पूर्व प्रकाशित आलेख एक के बाद एक दोबारा छापे जा रहे थे, अप्रकाशित रचनाएं प्रकाशित की जा रही थीं। इसके अलावा छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के मुखपत्र का काम अलग था, पत्रकारों से मुलाकात, बाहर से आने वाले नेताओं और सहयोगी संगठनों के नेताओं के साथ संवाद और संपर्क बनाये रखना, वगैरह वगैरह काम भी मेरे जिम्मे थे। इसके अलावा शेख अंसार और भीमराव बागड़े मूल रूप से उरला और कुफ्हारी के प्रभारी थे। नतीजतन भिलाई में नेतृत्व के लिए सिर्फ तीन लोग बच गये। मजदूर इलाके में कामरेड घोषाल और मजदूर इलाके से दस किमी दूर हुडको कालोनी में जनक लाल और अनूप। चूंकि आंदोलन के लिए पैसे दल्ली राजहरा से आते थे, इस खातिर वहां के नेता होने की हैसियत से जनकलाल और गणेश राम दूसरे सारे समान लोगों में से कुछ ज्यादा ही समान थे।

मजदूर जंगी आंदोलन चाहते थे। इसलिए बीच बीच में जंगी कार्यक्रम घोषित हो रहे थे। मसलन मालिकान के आवास स्थल का घेराव, मुरली मनोहर जोशी की एकता यात्रा अवरोध, अनिश्चितकालीन जेल भरो या डायरेक्ट एक्शन का आह्वान। किंतु पुलिस प्रशासन का आश्वासन मिलते ही जनक और अनूप मजदूरों से कोई चर्चा किये बिना कार्यक्रम वापस लेते रहे। अब समझ में आता है कि वर्ग संघर्ष के बजाय वर्ग समझौते के रास्ते की शुरुआत वहीं से हुई।

इस बीच मजदूरों का धीरज टूटने लगा था। प्रतिक्रिया में करो या मरो के नारे उछाले जाने लगे। नेताओं की समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसे हालात में क्या करें। तभी 1977 से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के पुराने मित्र, राजनैतिक रूप में कामरेड नियोगी के घनिष्ठ सहयोगी, बंगाल में हाल में कनोड़िया मजदूर आंदोलन के लिए मशहूर कामरेड प्रफुल्ल चक्रवर्ती ने 'महासंग्राम कार्यक्रम' का प्रस्ताव रखा। 1990 में नियोगी का एक भाषण ही इस प्रस्ताव की बुनियाद है। (बाद में इसी कार्यक्रम की तर्ज पर ही कनोड़िया महासंग्राम आंदोलन बंगाल में चला।)

मजदूर नेताओं ने इस प्रस्ताव पर सलाह मशविरा किया। उसके बाद संगठन की हर शाखा के हर स्तर पर व्यापक चर्चा के बाद भिलाई अवरोध का कार्यक्रम घोषित हो गया। एक हजार से ज्यादा श्रमिक मुखिया ने 29 टोलियों में पांच जिलों में चार हजार से ज्यादा गांवों में प्रचार अभियान चलाकर अभूतपूर्व मजदूर किसान मैत्री

भिलाई आंदोलन के समर्थन में तैयार कर ली। अब भिलाई आंदोलन सिर्फ मजदूर आंदोलन रह नहीं गया था, बल्कि वह छत्तीसगढ़ के जनमुखी विकास का आंदोलन बन गया था। तय हुआ कि 28 मई, 1992 को पांच लाख लोग भिलाई का अवरोध शुरू कर देंगे। फरवरी से मई तक केंद्रीय समिति ने सुचारु ढंग से काम किया। तब तक दो नये चिकित्सकों ने शहीद अस्पताल में आकर काम संभाल लिया था। कोलकाता से डॉक्टरों की टीमें भी मदद के लिए पहुंच रही थीं। नतीजतन केंद्रीय समिति में शामिल हम दो डॉक्टर भी अस्पताल छोड़कर आंदोलन में शामिल हो गये। इस चरण में अनूप सिंह को छोड़कर सभी लोग भिलाई अवरोध कार्यक्रम को लेकर सहमत थे। (अनूप केंद्रीय समिति की सभी बैठकों में इस कार्यक्रम का विरोध करते रहे।)

भिलाई अवरोध की व्यापक तैयारी से प्रशासन हिल गया। दूसरे तमाम जिलों से अतिरिक्त पुलिस बुला ली गयी। किंतु आखिरकार तत्कालीन उद्योग मंत्री कैलाश जोशी के मौखिक आश्वासन के भरोसे 25 मई 1992 को जनक लाल और गणेश राम ने अवरोध कार्यक्रम वापस ले लिया। जबकि इससे कुछ ही घंटे पहले केंद्रीय समिति की बैठक में फैसला हुआ था कि बिना लिखित आश्वासन के कार्यक्रम वापस नहीं लिया जायेगा। जाहिर है कि इन दोनों नेताओं के अलोकतांत्रिक कदम से पूरा संगठन गुस्से में फट पड़ा।

तभी केंद्रीय समिति में दो लाइनों की लड़ाई शुरू हो गयी। लोकतांत्रिक केंद्रिकता बनाम सिर्फ केंद्रिकता की लड़ाई। जनक, गणेश और अनूप को छोड़कर बाकी लोग लोकतांत्रिक रीति नीति के पक्ष में थे। केंद्रीय समिति में हमने मांग उठायी कि नेतृत्व आत्म समालोचना करके फिर पहले के कार्यक्रम में लौट आए। इस सवाल पर समिति के सदस्य आधे आधे बंट गये। आधे लोग आत्म समालोचना के पक्ष में थे तो बाकी आधे सदस्य किसी भी सूरत में अपनी आलोचना के लिए तैयार नहीं थे। ये हालात जारी रहे।

बहरहाल, 25 मई को पचास हजार लोगों का हुजुम भिलाई में जमा हो गया। हालांकि एक जुलूस भी निकालकर किसी तरह का शक्ति प्रदर्शन किया नहीं जा सका। 25 मई, 1992 को नक्सलबाड़ी अभ्युत्थान की रजत जयंती थी (अवरोध की तारीख तय करते वक्त किसी को यह ख्याल नहीं आया।) सीपीआईएमएल रेड फ्लैग ने इस मौके पर पूरे भिलाई में पोस्टर लगा दिये। (ये पोस्टर लोगों ने कोलकाता में भी देखे होंगे)। जुलूस निकालने पर उसमें नक्सली घुसपैठ करेंगे और वे मजदूरों को उकसा देंगे, इस बहाने जुलूस नहीं निकाला गया। गांवों से आये लोग हताश होकर वापस चले गये। सिर्फ परिवार समेत चार हजार बेरोजगार मजदूरों ने भिलाई में धरना शुरू कर दिया।

मजदूरों के दबाव में आकर धरने का जो कार्यक्रम शुरू हुआ, वह 25 मई से पहली जुलाई तक जारी रहा। तय हुआ था कि जब तक मांगें पूरी नहीं होतीं, धरना चलेगा। हमारी आशंका सच हो गयी, भिलाई अवरोध का खतरा टल जाने की वजह से मजदूरों की मांगें पूरी नहीं हो सकीं। भिलाई, रायपुर, इंदौर में बार बार त्रिपक्षीय वार्ता के बावजूद।

धरना जारी रखने में हर रोज पच्चीस हजार से ज्यादा रकम खर्च हो रही थी और फंड भी खत्म होता जा रहा था। दूसरी तरफ, मई जून के महीने में खुले मैदान में प्रचंड धूप आंधी पानी सह न पाने से काफी सारे मजदूर घर वापस चले गये। इसके बावजूद ढाई तीन हजार मजदूर अडिग थे कि वे किसी भी सूरत में मांगें पूरी न होने तक घर वापस नहीं लौटेंगे। इस संकट से निजात पाने के लिहाज से नेताओं ने अचानक पहली जुलाई को रेल पथ अवरुद्ध करा दिया। तीन लाख लोगों को लेकर जो कदम उठाना था, वह महज ढाई तीन हजार लोगों को लेकर उठाया गया। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा को खत्म करने के लिए राष्ट्र यंत्र ने बर्बर हमला कर दिया। पहली जुलाई को भिलाई गोलीकांड के बारे में आप जानते हैं। तरह तरह के केस लगाकर दो सौ मजदूर नेता और मुखिया कैद कर लिये गये। सात दिनों तक कर्फ्यू जारी रहा। ढाई महीने तक 144 धारा लागू रही।

गोलीकांड के बाद नील रतन घोषाल, शेख अंसार और भीमराव बागड़े गिरफ्तार हो गये। केंद्रीय समिति के दो अन्य सदस्य जनक और अनूप भूमिगत हो गये। (फागुराम शुरू से समिति में सक्रिय नहीं थे। वे संस्कृतिकर्म में ही व्यस्त रहते थे।) गणेश और राजहरा के दूसरे नेता डरे हुए थे। मैं और डॉ. जाना भिलाई में संगठन को नये सिरे से सक्रिय करने के काम में 2 जुलाई से लग गये। डॉक्टर होने की वजह से पुलिस से बचने की थोड़ी सहूलियत हमें थी। हमारी उल्लेखनीय मदद की सीमेंट उद्योग में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नेता निरंजन लाल यादव ने। किंवदंती की अग्निपाखी की तरह राख से उठकर खड़ा हो गया छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा। 3 सितंबर को भोपाल में विशाल रैली, 16 सितंबर को 144 धारा हटाने के लिए प्रशासन को मजबूर कर देने में कामयाबी के साथ 28 सितंबर को नियोगी के पहले शहादत दिवस पर पाशविक शक्ति के खिलाफ जनशक्ति का विशाल प्रदर्शन हो गया। यह सबकुछ पहले दर्जे के नेताओं की गैरमौजूदगी में हो गया। फिर भी यह आराम से इसलिए हो पाया कि तब तक हमने भिलाई के मुखिया लोगों को लेकर एक कमिटी बनाकर लोकतांत्रिक रीति नीति अपनायी।

सभा, जुलूस, जमायत छोड़कर दबाव बढ़ाने के दूसरे कार्यक्रम अपनाने में भूमिगत नेता बाधा डाल रहे थे। उन्हें फिर गोली चल जाने का डर था। हमने केंद्रीय समिति में बहस छेड़ दी कि वर्ग संघर्ष के जरिये ही मांगे पूरी हो सकती हैं। यही एकमात्र

रास्ता है।

हमने भिलाई में जो लोकतांत्रिक ढांचा तैयार किया, उसे जनक, गणेश और अनूप ने अपना प्रतिद्वंद्वी मान लिया। हमें फिर अस्पताल के कामकाज में लौटाया गया। यादव को बालोदा बाजार वापस लौटने के लिए मजबूर कर दिया गया। फिर पहली अक्तूबर से केंद्रीय समिति की बैठकें बंद हो गयीं। मुझसे संगठन के सारे काम वापस ले लिये गये।

जब तक केंद्रीय समिति कहती रही कि हम लोकतंत्र और वर्ग संघर्ष के पक्ष में हैं, समिति की बैठकों में हमारी बहस जारी रही। अब वह मौका भी नहीं था। मुखिया बैठक में भी हमें बोलने का मौका नहीं दिया जा रहा था। जनक गणेश अनूप की तिकड़ी ही सारे फैसले कर रही थी क्योंकि पैसे का नियंत्रण उन्हीं के हाथों में था।

हम लोग पीछे नहीं हटे। 14 फरवरी 1993 को भिलाई में एक क्लीनिक खोलकर मजदूरों के साथ संपर्क बनाये रखने का उपाय निकाल लिया। हर दूसरे हफ्ते मैं और डॉ. जाना भिलाई में रहने लगे। इसके साथ हमने अपना वक्तव्य रखना भी शुरू कर दिया। आज कहने में कोई बाधा नहीं है कि हमें केंद्रित करके भिलाई में मजदूरों का एक गोपनीय केंद्र बन गया। ये मजदूर संगठन में लोकतंत्र चाहते थे और भिलाई में वर्ग संघर्ष के रास्ते आंदोलन जारी रखना चाहते थे। कैदियों की रिहाई की मांग लेकर आंदोलन हो या चुनाव का आंदोलन के हित में इस्तेमाल किया जाये, ऐसी मांगें हमारे साथी उठाने लगे। मैं उनके पीछे था। संगठन पर काबिज नेताओं ने मुझे पहचानने में कोई गलती नहीं की और इसलिए संगठन से मुझे निकालने की कोशिशें 1993 से शुरू हो गयीं। मजूदरों ने हालांकि इन कोशिशों को बेकार कर दिया।

1994 के जून महीने में नेताओं को मौका मिल गया। नेताओं ने भिलाई इस्पात प्रबंधन के साथ दल्ली खदान के मशीनीकरण का समझौता कर लिया। नियोगी के नेतृत्व में मजदूरों ने 1978 से मशीनीकरण रोके रखा था, आंदोलन के दबाव में वहां अर्ध मशीनीकरण चालू था। आधे से ज्यादा मजदूरों की इस समझौते की वजह से छंटनी होने वाली थी, इसलिए मैंने और शहीद अस्पताल के डॉक्टरों ने इसका विरोध कर दिया। कामरेड आशा ने इस समझौते के खिलाफ 3 जून को दल्ली राजहरा शहीद दिवस पर आम सभा में भाषण भी दे दिया।

विचारधारा के स्तर पर नेता हमारा मुकाबला नहीं कर पा रहे थे। क्योंकि हम जो कह रहे थे, कामरेड नियोगी के लेखों में उसका समर्थन था। इसलिए अब छत्तीसगढ़ी गैरछत्तीसगढ़ी मुद्दा उछाल दिया गया। मेरे खिलाफ आरोप लगाया कि मैं ऐटक के साथ मिलकर समझौते के खिलाफ कोई लीफलेट निकालने जा रहा था।

21 जून को मेरी गैरहाजिरी में (तब में पारिवारिक काम से कोलकाता में था) दल्ली राजहरा के कुछ मुखिया ने बैठक करके मुझे अस्पताल से निलंबित कर दिया।

मैंने इस पर लिखित मांग की कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की सभी शाखाओं के मुखिया की बैठक करके उसमें मुझे अपना पक्ष रखने का मौका दिया जाये। वह मौका नहीं मिला। तब मैं अपने बयान का छह पेज का एक लीफलेट लेकर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के सदस्यों के बीच गया। नेताओं ने फैसला किया कि बहुत हुआ- इस बार निष्कासन। 13 जुलाई को भिलाई की मुखिया बैठक ने बहिष्कार को खारिज कर दिया। बालोदा बाजार और चांपा की शाखाओं ने भी इसे खारिज कर दिया। इसके बावजूद नेताओं ने प्रेस विज्ञप्ति जारी कर दीः डॉ. गुण निष्कासित। हमारे साथियों ने लेकिन संगठन नहीं छोड़ा। वे संगठन में वैचारिक संघर्ष चला रहे थे। 18 अगस्त को पुलिस के पहरे में भिलाई आकर नेताओं ने नीलरतन घोषाल और मेरे कुछ सहयोगियों के भी निष्काशन की घोषणा कर दी।

हम एकता के पथ पर थे और हम चाह रहे थे कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा नियोगी के आदर्शों पर चैंपियन बने। किंतु इसके बाद समांतर संगठन बनाने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं था। तैयार हो गया छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (नियोगीपंथी)। हम लोग छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में नियोगी की लोकतांत्रिक केंद्रिकता और वर्ग संघर्ष के आदर्शों को लागू करने पर जोर दे रहे थे, इसीलिए यह नाम दिया गया था।

एक तरफ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का अर्थ बल, राष्ट्रीयता को मुद्दा बनाकर इकट्ठा जन बल, पुलिस प्रशासन की मदद और मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह के साथ जनक लाल का मधुर संबंध। दूसरी तरफ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (नियोगी) नियोगी के आदर्शों को लागू करने का प्रयास कर रहा था। यह असम लड़ाई थी।

इसी बीच हमारे पक्ष के एक खास नेता (नाम नहीं बता रहा हूं) ने लाल हरे झंडे पर सवाल खड़ा कर दिया। उनका कहना था कि मजदूर यूनियन की कोई राजनीति नहीं रहेगी और उसका कोई झंडा भी नहीं रहेगा। वे कहने लगे कि अब और आंदोलन नहीं, मालिकों और पाकेट यूनियनों को पकड़ कर कारखानों में दाखिल हुआ जा सकता है। हमारे कुछ साथियों ने इसके असर में आकर दिग्भ्रमित होकर दलाली में नाम लिखा लिया। बड़ा हिस्सा ही मेरे और उस नेता के मतभेद की वजह से निष्क्रिय हो गया। (भारत में मजदूर वर्ग अब भी नेताओं के भरोसे है। सामंतवादी इस मूल्यबोध से न जाने कब मुक्ति मिलेगी!) लेकिन एक झुंड नेता बचे रह गये, जो आज भी बचे हुए हैं, जो जीवन में अंत तक नियोगी के निर्देशित पथ पर चलने को दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। हालांकि उनकी संख्या कम है।

पिछले साढ़े चार साल के दौरान भिलाई के मजदूरों ने बहुत कठिन लड़ाई की है। बहुत बलिदान दिया है। किंतु इतने लंबे आंदोलन का कोई सीधा नतीजा नहीं निकलने, नियोगी के बाद के छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नेताओं के विश्वासघात, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के दो फाड़ हो जाने और सही धारा का प्रतिनिधित्व करने वाले

अंश में भी मतभेद- इन सारी बातों को लेकर मजदूर हताशा के शिकार हो गये हैं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (नियोगी पंथी) की ताकत कम है और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने तो आंदोलन का रास्ता ही छोड़ दिया। बातचीत के जरिये समस्याएं सुलझाने में अब उसकी आस्था है। (छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नेता अब कहते हैं कि नियोगी क्रांतिकारी नहीं थे बल्कि वे गांधीवादी थे।)

फिर भी मैं आशावादी हूं। शहीदों का खून बेकार नहीं जायेगा। शोषण बढ़ता रहेगा और इसके प्रतिरोध में भिलाई आंदोलन फिर तेज होगा, उम्मीद है।

सवाल उठ सकता है कि ऐसे कैसे हो गया ? मेरी धारणा है कि वैज्ञानिक समाजवाद के प्रति प्रतिबद्ध (नियोगी के बाद) किसी केंद्र की अनुपस्थिति इस संकट की वजह है। तो क्या इसका मतलब यह हुआ कि नियोगी व्यर्थ थे ? उनकी आलोचना से पहले ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समझना जरूरी है। अर्ध शिक्षित या सिरे से अपढ़ अदक्ष मजदूरों की पहली पीढ़ी (जिनकी ग्रामीण पृष्ठभूमि है और जिनमें सामंतवादी मूल्यबोध की जड़े गहरी पैठी हैं) को लेकर उनका शुरुआती संगठन और आंदोलन रहा है। नेतृत्व की दूसरी पंक्ति तैयार करने के लिए ही वे भिलाई पहुंचे। भिलाई जाने के सालभर के अंदर उन्हें अपनी जान गवांनी पड़ी। लेकिन साल भर में जो काम उन्होंने कर दिया और उनके बाद हम लोगों ने जो कोशिशें जारी रखीं, उसके नतीजतन भारत में समाज परिवर्तन की लड़ाई में कुछ रत्न भिलाई से निकलने की उम्मीद है।

सिर्फ राज्य नहीं, छत्तीसगढ़ ने मांगी थी मुकम्मल आजादी

'हमारे देशप्रेम की पहचान..
हमारा छत्तीसगढ़
छोटा और सुंदर राज्य छत्तीसगढ़
शोषणविहीन छत्तीसगढ़
हमारे सपनों का छत्तीसगढ़'

कैसा होगा सपनों का वह छत्तीसगढ़?
जहां सब ला पीये के पानी मिलही,
जहां हर खेत में सिंचाई के साधन होही,
जहां हर हाथ ला काम मिलही,
जहां किसान ला पैदावर के सही कीमत मिलही,
जहां हर गांव में अस्पताल होही,
जहां हर लइका के सही पढ़ाई वर स्कूल होही,
जहां सब ला भूइयां अउ घर मिलही,
जहां गरीबी शोषण और पूंजीवाद नइ होही,
अइसन छत्तीसगढ़ कब बनही?
जब किसान मजदूर के छत्तीसगढ़ में राज होही।
अर्थात
'जहां सबको पेयजल मिले,
जहां हर खेत में हो सिंचाई का पानी,
जहां हर हाथ में हो रोजगार,
जहां किसानों को मिले फसल के उचित दाम,
जहां हर गांव में हो अस्पताल,
जहां सभी बच्चों के लिए हो स्कूल,

जहां सबको मिले जमीन और घर,
जहां गरीबी, शोषण और पूंजीवाद न हो,
ऐसा छत्तीसगढ़ कब होगा?
जब छत्तीसगढ़ में मजदूर किसान राज होगा!'

छत्तीसगढ़ मुक्ति आंदोलन के जिस दौर की बातें कर रहा हूं, उससे पुराने आंदोलन खालिस्तान आंदोलन, झारखंड आंदोलन, कश्मीरी राष्ट्रीयता आंदोलन या पूर्वोत्तर में उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के आंदोलन रहे हैं। बाद में उत्तराखंड आंदोलन और गोरखालैंड आंदोलन ने भी शंकर गुहा नियोगी के छत्तीसगढ़ आंदोलन के मुकाबले ज्यादा ध्यान खींचा है। 1979 में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की स्थापना से पहले अलग छत्तीसगढ़ राज्य की मांग लेकर कुछ लोग मुखर हो गये थे, बाद में जिनका नेतृत्व कांग्रेस सांसद पवन दीवान ने किया था। नियोगी की मृत्यु के बाद अखबारों की सुर्खियों में बीच बीच में पृथक छत्तीसगढ़ की मांग उठायी जा रही है। इस मांग के समर्थन में सुर से सुर मिला रहे हैं कांग्रेस, भाजपा, जनता दल के स्थानीय बड़े नेता भी।

किंतु पृथक राज्य की मांग लेकर होने वाले दूसरे आंदोलनों से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के आंदोलन का फर्क एकदम साफ साफ है। 'जनता छत्तीसगढ़ का विकास चाहती है। सिर्फ छोटा राज्य बन जाने से विकास हो जायेगा, मौजूदा राजनीतिक परिस्थितियों में इसकी कोई गारंटी नहीं है। इस आंदोलन का संचालन जनता के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मुक्ति के तय लक्ष्यों को लेकर करना होगा। छत्तीसगढ़ी जनता की व्यापक एकता ही आजादी की गारंटी है। यह एकता सिर्फ संघर्षों की नींव पर बन सकती है, सदस्यता के चंदा बिल काटकर नहीं।'

अर्थात उत्पीड़ित राष्ट्रीयता की आजादी (छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की दिशा, उसका लक्ष्य, कार्यक्रम के मुताबिक) के विषय को नियोगी के नेतृत्व में मोर्चा वर्ग संघर्ष की जमीन पर खड़े होकर देखता था।

'यह आंदोलन अगर जनता की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आजादी के लक्ष्य हासिल करने की तय दिशा में न चले तो इसके उग्र राष्ट्रवाद या पृथकवाद के दुश्चक्र में फंस जाने से भयंकर नुकसान होता है।' इसके उदाहरण हमने असम में बंगाली खदेड़ो, भाजपा के विदेशी भगाओ या घुसपैठ रोको आंदोलनों से लेकर बोडो-संथाल दंगों में देख लिया है।

इस मामले में छत्तीसगढ़ उज्ज्वल अपवाद है। 1984 में इंदिरा हत्याकांड के बाद देश व्यापी सिख नरसंहार अभियान के शिकंजे से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के दोनों गढ़ दुर्ग जिले के दल्ली राजहरा और राजनांदगांव जिले के राजनांदगांव शहर बच गये थे। छत्तीसगढ़ के दूसरे शहरों से सिखों ने इन दोनों शहरों में शरण ली थी। 6 दिसंबर,

1992 को याद करें, भाजपा, बजरंग दल और शिवसेना के बाबरी विध्वंस के बाद वामपंथी किलों समेत पूरे भारत में, लगभग सारे मध्य प्रदेश में दंगे भड़क गये थे। तब भिलाई श्रमिक आंदोलन को लेकर तीनों जिले दुर्ग, राजनांदगांव और रायपुर आंदोलित थे। रोजी रोटी की लड़ाई में एकजुट सभी समुदायों के मेहनतकश लोगों को उकसाने में नाकाम रही है सांप्रदायिक ताकतें।

जाहिर है कि सचेत प्रयासों के फलस्वरूप ही ये सारी सोच के दायरे से बाहर घटनाएं संभव हुई थीं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने शुरुआत में ही 'छत्तीसगढ़ी' और 'गैरछत्तीसगढ़ी' की जो संज्ञा तय कर दी और उसका प्रचार किया, वह अभिनव है।

कौन हैं छत्तीसगढ़ी?

1. वे तमाम लोग छत्तीसगढ़ी हैं, जो छत्तीसगढ़ के भौगोलिक इलाके में ईमानदारी के साथ मेहनत मजदूरी करके आजीविका कमाते हैं।
2. जो छत्तीसगढ़ की आजादी के लिए दिल से समर्पित हैं।
3. जो सामंतवादी शोषण नहीं करते।
4. जो पूंजीवादी व्यवस्था का विनाश चाहते हैं।
5. जो छत्तीसगढ़ का लोकतांत्रिक विकास चाहते हैं।
6. जो इस दुनिया के सर्वहारा वर्ग के तमाम लोगों के साथ भाईचारे का सबंध बनाये हुए हैं।
7. पुश्तैनी तौर जो छत्तीसगढ़ के निवासी हैं, लेकिन मौजूदा दौर में दूसरे इलाके में आजीविका की वजह से रहते हैं और शोषक नहीं हैं।
8. दूसरी राष्ट्रीयताओं के वे तमाम लोग जो छत्तीसगढ़ औद्योगिक इलाके में ईमानदारी और मेहनत से जीविका निर्वाह करते हैं, छत्तीसगढ़ में स्थाई तौर पर रहना चाहते हैं और छत्तीसगढ़ के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के काम में शरीक होते हैं।

छत्तीसगढ़ के दुश्मन कौन हैं?

सामंतवादी ताकतें (मालगुजार और साहूकार), अर्ध सामंती ताकतें (ठेकेदार, दलाल, अफसरशाही) और इन प्रवृत्तियों वाले लोग। चाहे वे पुश्तैनी तौर पर छत्तीसगढ़ में जनमे हों और छत्तीसगढ़ी भाषा भी बोलते हों। छत्तीसगढ़ मुक्ति आंदोलन में दो शब्द बेहद जाने पहचाने हैं- 'भूमिपुत्र' और 'श्रमपुत्र'। क्रमवार इसके मायने हैं- छत्तीसगढ़ के किसान और छत्तीसगढ़ के मेहनतकश लोग (जनम से वे छत्तीसगढ़ के बाहर के लोग भी हो सकते हैं)। भूमिपुत्रों और श्रमपुत्रों की मजबूत एकता ही छत्तीसगढ़ आंदोलन की असली ताकत है।

नियोगी हमेशा यूनानी पौराणिक कथा के वीर एंटीउस की कहानी मजदूरों को सुनाया करते थे। एंटीउस तब तक अपराजेय बने रहे, जबतक उनके दोनों पांव जमीन पर थे। इसी तरह मजदूर भी अपराजेय बन सकते हैं अपने मजबूत मित्र भूमिपुत्र यानी किसानों के साथ दृढ़ मैत्री के जरिये।

छत्तीसगढ़ी राष्ट्रीयता की आजादी : सामाजिक क्रांति की दिशा में आगे बढ़ना

कामरेड नियोगी के लिखे 'Chattihgagh and National question' से उद्दृत कर रहा हूं: 'सर्वहारा की मुक्ति के लिए क्रांति ऐतिहासक अनिवार्यता है। दूसरी प्रगतिशील शक्तियों के लिए भी समाज व्यवस्था में गुणात्मक बदलाव बतौर क्रांति जरूरी है। राष्ट्रीयताओं के आत्म नियंत्रण की लड़ाई इस गुणात्मक बदलाव की दिशा में एक कदम है। मौजूदा समाज व्यवस्था का विकल्प जनता के नेतृत्व में एक नया समाज, जो जनवादी लोकतांत्रिक क्रांति के मध्य गठित हो सकता है। राष्ट्रीयताओं की पहचान की लड़ाई प्रगतिशील ताकतों को पहचानने और उन्हें एकताबद्ध करने में मदद करेगी। इसके ठीक बाद सही समाजवादी व्यवस्था के लिए कदम उठाना है।'

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चाः यह राष्ट्रीयता की आजादी का मोर्चा तो है ही, जनवादी लोकतांत्रिक क्रांति का मोर्चा भी है

'छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा, छत्तीसगढ़ के किसानों, मजदूरों, बुद्धिजीवियों और दूसरे देशप्रेमी वर्गों का लड़ाका मोर्चा है। औद्योगिक श्रमिक वर्ग इस मोर्चे की अगुवाई करेगा। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा छत्तीसगढ़ के मजदूरों, किसानों, छात्रों, नौजवानों, महिलाओं और दूसरे शोषित पीड़ित जनता का स्वेच्छा से निर्मित संगठन है, जिसका लक्ष्य गुणात्मक रूप में छत्तीसगढ़ी जनता का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक विकास करना है। छत्तीसगढ़ भूभाग में एक आत्मनिर्भर आर्थिक नीति के जरिए छत्तीसगढ़ी जनता का स्वाभिमान बोध का जागरण है और शोषण विहीन समाज व्यवस्था की तरफ कदम बढ़ाना है।' (छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की दिशा, लक्ष्य, कार्यक्रम से)।

श्रमिक वर्ग की अगुवाई का सवाल

मार्क्सवाद की शिक्षाः हर राष्ट्रीयता का आत्म निर्णय का अधिकार जायज है। मार्क्सवादियों को राष्ट्रीयता की मांग पर लड़ाई के समर्थन में जरूरत के मुताबिक शामिल होना चाहिए। किंतु राष्ट्रीयता की मुक्ति के आंदोलन में श्रमिक वर्ग के नेतृत्व का मामला छत्तीसगढ़ आंदोलन की खासियत है। छत्तीसगढ़ की बहुसंख्य जनता कृषिजीवी है। किसान, खासकर आदिवासी किसान भयंकर शोषण के शिकार हैं। चूंकि भूमि समस्या का समाधान राष्ट्रीयता के सवाल के हल से जुड़ा हुआ है, इसलिए कृषिजीवी जनता को भी छत्तीसगढ़ चाहिए। छत्तीसगढ़ के बुर्जुआ और पेटी बुर्जुआ

भी अपने वर्ग हित में अलग छत्तीसगढ़ राज्य चाहते हैं। किंतु अगर श्रमिक वर्ग शोषण विहीन छत्तीसगढ़ के लक्ष्य के मुताबिक छत्तीसगढ़ आंदोलन न चलायें तो इस आंदोलन की परिणति भी झारखंड आंदोलन की तरह हो जाना तय है। (इस बिंदू पर गौरतलब है कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा और झारखंड मुक्ति मोर्चा का गठन एक ही दौर में हुआ।) कामरेड नियोगी से सुना है कि दोनों आंदोलनों के नेतृत्व के बीच संगठन बनने से पहले सलाह मशविरा भी हुआ था। कामरेड एके राय के 'झारखंड नहीं, लालखंड' नारा देने के बावजूद आंदोलन का नेतृत्व श्रमिक वर्ग से छीनकर शिबू सोरेन जैसे व्यक्ति के हाथों में सौंप दिया था। जिसका नतीजा आज साफ है।

1979 में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के गठन से लेकर 1991 में नियोगी की शहादत तक कुल बारह साल की अवधि में छत्तीसगढ़ अलग राज्य की मांग लेकर आंदोलन झारखंड आंदोलन से भी तेज हो सकता था। लेकिन मकसद सिर्फ आंदोलन के लिए आंदोलन नहीं था। आंदोलन का मकसद था एक तय मंजिल तक पहुंचने का। इसलिए आंदोलन की अगुवाई जिस श्रमिक वर्ग को करना था, उसे एकताबद्ध, शिक्षित करने का काम उनके लिए प्राथमिक वरीयता का था।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का कार्यक्रम

1. तात्कालिक अकाल की वजह से बनी परिस्थितियों से बचने के लिए अन्यत्र पलायन करने के बजाय छत्तीसगढ़ की जनता अपने अपने ब्लॉक में एकत्रित हो जाये और जब तक रोजगार की गारंटी नहीं मिले, तब तक ब्लॉक सदर में धरना जारी रखें।
2. पूंजीपतियों को बाध्य किया जाये कि वे अपने अपने उद्योग से होने वाले मुनाफे का एक तय हिस्सा जिले में सिंचाई और पेयजल के लिए खर्च करें। वे राजी नहीं होते तो उनके कारखानों का घेराव कर दिया जाय।
3. ठेका मजदूरों, असंगठित मजदूरों, बीड़ी मजदूरों, पत्थर तोड़ने वाले मजदूरों और जंगलात में काम करने वाले मजदूरों को रोजगार और सहूलियतों की मांगें लेकर पूरे छत्तीसगढ़ में एक साथ आंदोलन चलाया जाये।
4. सांप्रदायिकता, जातिवाद और पृथकतावाद के विरुद्ध हर स्तर पर आंदोलन किया जाये।
5. सामाजिक बुराइयों, शराबखोरी, औरतों पर जुल्म, जुआ सट्टा के खिलाफ हर स्तर पर आंदोलन चलाया जाये।
6. गांवों में छत्तीसगढ़ी भाषा के माध्यम से शिक्षा का काम शुरू किया जाये और गोंड, हल्वी और छत्तीसगढ़ की दूसरी भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिए कदम उठाया जाये।

7. वनज उत्पादन लाक्षा, चिरौंजी, शाल, कुसुम, करौंज, कोसा इत्यादि का सही मूल्य देने के लिए सरकार और व्यापारियों को बाध्य किया जाये।
8. वनज उत्पादन और कृषि उपज पर निर्भर उद्योगों की स्थापना के लिए आंदोलन के जरिये सरकार और पूंजीपतियों को बाध्य किया जाये।
9. शराब की सरकारी गैरसरकारी भट्टियों को बंद कर दिया जाये।
10. आदिवासी इलाकों में वन विभाग के कर्मचारियों और अफसरों द्वारा शोषण अत्याचार का सक्रिय विरोध किया जाये।
11. साहूकारों और ठेकेदारों द्वारा इस राज्य में गरीब किसानों की जमीन हड़पी गयी है। इस वर्ग को एक इंच जमीन पर भी कब्जे का नैतिक अधिकार नहीं है। इलाके के गरीब मजदूर किसान यह सारी जमीन अपने दखल में ले लेंगे।
12. छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की ओर से ग्रामीण विकास के लिए रचनात्मक परीक्षण निरीक्षण किये जायेंगे।
13. कोरंडम और टीन के अवैध खनन जल्द से जल्द रोक दिया जाये।
14. तेंदुपत्ता इकट्ठा और छंटाई करने वाले मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी के लिए संगठित किया जाये।
15. छत्तीसगढ़ में कपास, ईंख, इत्यादि वैकल्पिक कृषि उत्पादन बढ़ाया जाये।
16. मशीनीकरण का विरोध करते हुए श्रम आधारित उद्योगों की स्थापना की जाये।
17. 'नया अंजोर' सांस्कृतिक मंडली की गांव गांव में शाखा खोली जाये, जिससे सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण और विकास हो। मुंबई मार्का फिल्मी संस्कृति का निषेध हो।
18. हर गांव में पेयजल की व्यवस्था के लिए सरकार पर दबाव डाला जाये।
19. टीबी, कुष्ठ, इत्यादि रोगों के बारे में सही जानकारी इकट्ठी की जाये और मरीजों के सही इलाज के लिए सरकार के खिलाफ आंदोलन संगठित किया जाये।
20. इन सभी रचनात्मक कामों को अंजाम देने के लिए मुक्ति सेना का गठन किया जाये।

(सूत्रः छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की दिशा, लक्ष्य और कार्यक्रम)

संगठन के विस्तार के क्रम को देखें तो हम देख सकते हैं कि शुरुआत में उद्योगों, खदानों में मजदूर यूनियनें बनीं। श्रमिक आंदोलन हुआ। आंदोलन की आग में तप कर इस्पात बन गये श्रमिक नेता। इसके बाद उस औद्योगिक क्षेत्र के चारों तरफ की शोषित जनता को संगठित करके छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के शाखा संगठन बने।

नियोगी के पहले सारे श्रमिक संगठन अपढ़, अदक्ष खदान मजदूरों को लेकर बने। पूरे छत्तीसगढ़ व्यापी मुक्ति आंदोलन की अगुवाई के लिए इन संगठनों की पर्याप्त योग्यता नहीं थी। उन्होंने इंजीनियरिंग, कैमिकल उद्योगों के दक्ष श्रमिकों के मध्य उस नेतृत्व की संभावना देखी थी। इसलिए अपनी जान का जोखिम उठाकर, निश्चित मृत्यु जानते हुए वे योग्य नेतृत्व की खोज में भिलाई के आंदोलन में कूद पड़े थे।

घटनाक्रम या आंदोलन की धारा

19 दिसंबर, 1979 छत्तीसगढ़ के इतिहास में एक महत्वपूर्ण तारीख है। इस दिन छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के तत्वावधान में एक नई धारा की शुरुआत हो गयी। 1856-57 के दौर में मौजूदा रायपुर जिला के जन नेता वीर नारायण सिंह की स्मृति में शहीद दिवस मनाने का संकल्प लिया गया। नारायण सिंह ने सामंतवाद और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ किसान विद्रोह का नेतृत्व किया था। ब्रिटिश इतिहासकारों और बाद में भारतीय इतिहासकारों ने भी नारायण सिंह को डकैत बताकर उनकी स्मृति मिटाकर उन्हें विस्मृति के अंधेरे में डुबोने की कोशिशें की हैं। नारायण सिंह की शहादत के 122 साल बाद श्रमिक संघ ने उनका असली इतिहास जनता के सामने लाकर छत्तीसगढ़ी जनता को उनके गौरवशाली अतीत का स्मरण करा दिया। वीर नारायण सिंह जिस सामंती शक्ति के खिलाफ लड़ रहे थे, उसे ब्रिटिश साम्राज्यवाद का समर्थन था। नियोगी ने इतिहास से शिक्षा ली। उन्होंने आह्वान किया कि छत्तीसगढ़ की सामंततांत्रिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मदद लेकर छत्तीसगढ़ की संपदा भारत का सत्तावर्ग लूट रहा है, उसके खिलाफ श्रमिक वर्ग को छत्तीसगढ़ की सारी शोषित जनता को संगठित करना है। छत्तीसगढ़ की विशाल वनज खनिज संपदा पर अपना कब्जा हासिल करने के लिए भारत का सत्तावर्ग वैश्विक साम्राज्यवादी ताकतों और अंतरराष्ट्रीय पूंजीवाद द्वारा थोपी आर्थिक नीतियां छत्तीसगढ़ के औद्योगिक विकास के तहत लागू कर रहा है। इसलिए छत्तीसगढ़ की जनता को इस वैश्विक साम्राज्यवाद के खिलाफ भी लड़ना होगा। इसके बाद ही छत्तीसगढ़ का समतामूलक विकास हो सकेगा और शोषण विहीन समाज के लक्ष्य की तरफ कदम बढ़ाया जा सकेगा। मेहनतकश जनता को प्रेरित करने के लिए 'छोटा और सुंदर छत्तीसगढ़' का सपना मजदूरों के सामने रखने के लिए जो स्लोगन कविता नियोगी ने लोकप्रिय बना दिया, उसी के साथ इस आलेख की शुरुआत है।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा संचालित छत्तीसगढ़ आंदोलन सत्ता वर्ग के नेताओं के संचालित 'अलग छत्तीसगढ़' आंदोलन से मौलिक रूप से भिन्न है। अलग छत्तीसगढ़

का आंदोलन सुविधावादी और देशद्रोही ताकतों का हथियार है, अंध राष्ट्रीयतावाद के नारे उछालकर वे विभिन्न राष्ट्रीयताओं की मेहनतकश जनता को बांटना चाहते हैं। 'छत्तीसगढ़ छत्तीसगढ़ियों का, न किसी के बाप का' जैसे उग्रवादी नारे उछालकर छत्तीसगढ़ के जनसमुदायों और बाहर से आये विभिन्न राष्ट्रीयताओं के मजदूरों के बीच दंगा भड़काना उनका मकसद है। उनके भ्रात'घाती इस दंगे की साजिश को छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने अपने नारे 'शोषकों की जागीर नहीं है, छत्तीसगढ़ हमारा है', नारे के साथ नाकाम कर दिया।

भारत से अलगाव नहीं, बल्कि संघीय ढांचे के तहत शोषण विहीन भारत के अंग बतौर शोषण विहीन छत्तीसगढ़ की धारणा को लोकप्रिय बनाकर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने 'नया भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' का नारा दिया।

इस नारे को अमली जामा पहनाने के लिए छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने जो कदम उठाये, उसका सार संक्षेप कुछ इस तरह हैः

1. सांस्कृतिक अस्मिता के सवाल को छत्तीसगढ़ की संपदा के लूट के साथ जोड़ा गया।
2. छत्तीसगढ़ में असमान विकास, अर्ध सामंती ग्रामीण अर्थव्यवस्था के जरिये शोषण, पूंजी नियंत्रित औद्योगिक उपक्रमों के लिए जिम्मेदार शक्तियों को 'छत्तीसगढ़ के दुश्मन' के रूप में चिन्हित किया गया। (इस आलेख में छत्तीसगढ़ के दुश्मन की संज्ञा दी गयी है। पढ़ें।)
3. इस आंदोलन का संचालन श्रमिक वर्ग के नेतृत्व में किया गया और आंदोलन में जनता के सभी शोषित तबकों को खासकर छोटे किसानों, बेरोजगारों को सक्रिय रूप में जोड़ा गया।
4. आंदोलन की शुरुआत में ही 'छत्तीसगढ़ी कौन हैं', इस सवाल का जबाव तय कर दिया गया और भूमिपुत्र और श्रम पुत्र की अवधारणा पेश की गयी।
5. उपर्युक्त विषयों के साथ नियोगी का एक और अभिनव अवदान है 'विकल्प की खोज'।

शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कृति, विज्ञान- तकनीक-पर्यावरण हर विषय में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा विकल्प की खोज करता रहा है। सपनों का छत्तीसगढ़ बनाने के लिए विकल्प जरूरी हैं, लेकिन इस सपने के हर हिस्से को नियोगी के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने विकल्प निर्माण के अपने कामों के जरिये साकार कर दिया। इसी परीक्षण निरीक्षण के लिए नारा थाः 'संघर्ष के लिए निर्माण, निर्माण के लिए संघर्ष'। नये समाज की स्थापना के लिए लड़ाई और उस लड़ाई में शामिल होने के लिए जनता को प्रेरित करने के लिए निर्माण के काम। वे सारे निर्माण कार्य सामाजिक बदलाव की

लड़ाई में नेतृत्व करने लायक नये मूल्यबोध से लैस मनुष्य तैयार करने के कारखानों में तब्दील हो गये।

राष्ट्रीयता की समस्या के समाधान के सिलसिले में नियोगी के परीक्षण निरीक्षण कितने सही थे, इस पर कोई दावा नहीं किया जा सकता। फिरभी यह मानना ही होगा कि राष्ट्रीयताओं के मुक्ति आंदोलनों में एक ताजा बयार लेकर आया नियोगी का बनाया छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा।

नियोगी की शहादत के बाद पांच साल बीत चुके हैं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा पहले की तरह उतना शक्तिशाली अब नहीं है। किंतु छत्तीसगढ़ मुक्ति आंदोलन के सबक अमूल्य धरोहर बनकर रह जायेंगे।

राष्ट्रीयता के मुक्ति आंदोलन में नई रोशनी लाने वाले छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के स्रष्टा कामरेड शंकर गुहा नियोगी शहीद हुए थे 28 सितंबर, 1991 को। उनके पांचवें शहादत दिवस पर उनके सपनों के शोषण विहीन समाज की स्थापना की लड़ाई में शामिल होने का संकल्प लें।

छत्तीसगढ़ : उस दौर में

- छत्तीसगढ़ का कुल क्षेत्रफल 135.2 हजार वर्ग किमी.।
- 1981 में छत्तीसगढ़ की जनसंख्या एक करोड़ 40 लाख।
- छत्तीसगढ़ के कुल आयतन का 45% वनांचल।
- 1979-80 में पूरे इलाके में खेती की जमीन 33.3% थी।
- उस वक्त खेती की जमीन के 55% से ज्यादा हिस्से पर धान उगाया जाता था।
- उस वक्त 516 हेक्टर जमीन की सिंचाई का इंतजाम था।
- सन् 1951 में छत्तीसगढ़ की कुल जनसंख्या के 98.3% देहात के लोग थे।
- 1981 में यह अनुपात 89.2% हो गया।
- 1981 में कुल जनसंख्या के 30% लोग अनुसूचित जनजातियों के थे।
- 1979 में छत्तीसगढ़ में कुल रजिस्टर्ड फैक्ट्री 1410 थे। इनमें 41%कृषि आधारित, 39% वन उपज के कच्चा माल पर निर्भर, 6% खनिज कच्चा माल पर निर्भर और 10% विभिन्न तरह की फैक्ट्री।
- भिलाई इस्पात कारखाने की उत्पादन क्षमता 4 मिलियन टन वार्षिक थी। उसके कैप्टिव माइंस की संख्या 10 थी। इसके अलावा सल्फ्यूरिक एसिड, बेंजल, वगैरह विभिन्न तरह के बाइ प्रोडक्ट के कुछ कारखाने भी उसके अपने थे।
- कोरबा के पास कोयला खदानें, सारे इलाके के लिए ताप विद्युत केंद्र और

अल्युमीनियम कारखाना।

- जामुल, मंधार, टिलडा और अकालतारा में सीमेंट कारखाने।
- राजनांदगांव में ब्रिटिश राज के जमाने में तैयार बेंगल नागपुर काटन मिल।
- बाइलाडिला (बस्तर) में मैकानाइज्ड लौह अयस्क खदानें, जहां से सारे अयस्क का निर्यात जापान को होता है।
- छत्तीसगढ़ की जमीन के नीचे लौह अयस्क, कोयला, लाइम स्टोन, डलोमाइट, कोयार्जाइट, तांबा, यूरेनिययम, टीन, बक्साइट, फ्लुओस्पार, मैगनीज जैसे मूल्यवान खनिज संपदा का विशाल भंडार संचित है।
- 1981 में रजिस्टर्ड बेरोजगारों की संख्या 45 लाख थी।

छत्तीसगढ़ : अब

- पहली नवंबर, 2000 को मध्यप्रदेश को तोड़कर नया राज्य छत्तीसगढ़ बनाया गया।
- छत्तीसगढ़ की राजधानी वृहत्तम नगर रायपुर बना।
- इस वक्त छत्तीसगढ़ राज्य पांच विभागों और 27 जिलों में बंटा है।
- बस्तर विभागः बीजापुर, सुकमा, दंतेबाड़ा, कोंडागांव, नारायणपुर, कांकेर।
- दुर्ग विभागः कवर्धा, राजनांदगांव, बालोद, दुर्ग, वैमेतरा।
- विलासपुर विभागः विलासपुर, मुंगेली, कोरबा, जांजगीर, रायगढ़।
- सरगुजा विभागः कोरिया, सूरजपुर, सरगुजा, बलरामपुर, यशपुर।
- विधानसभा में नब्बे सीटें हैं।
- छत्तीसगढ़ में नौ संसदीय क्षेत्र हैं।
- हाईकोर्ट विलासपुर में है।
- कुल क्षेत्रफलः 1,35,194 किमी., भारत का दसवां वृहत्तम राज्य।
- 2011 की जनगणना मुताबिक जनसंख्याः25, 540, 196, जनसंख्या के हिसाब से भारत में 17 वां स्थान।
- आबादी का घनत्व : 188.9 प्रति वर्ग किमी.।
- साक्षरता दरः 64.7% (भारत में 23 वां नंबर)
- सरकारी भाषाः हिंदी और छत्तीसगढ़ी।

प्रसंगक्रम

पुण्यव्रत गुण ने एक पांडुलिपि पकड़ा कर पूछा, 'क्या थोड़ा देख लेंगे?' सामर्थ्य के मुताबिक देख लिया। कहा, 'नियोगी के परीक्षण निरीक्षण की वैचारिक और व्यवहारिक प्रासंगिकता पर एक आलेख होता तो बढ़िया रहता'। उन्होंने जबाव में कहा, 'वैसे

तत्व वगैरह मेरी समझ में नहीं आते, आप लिख दीजिये'। समझने में दिक्कत नही है, पहली बात उनकी विनम्रता है लेकिन दूसरी..मैं अदरक का कारोबारी हूं-- क्या करुं? उस वक्त चले जाने के इंतजार में दिन कट रहे थे, उन जैसे मनुष्य के चक्कर में आकर पढ़ लिया। तीन महीने के भीतर उन्होंने मुझे ऐसे कामकाजी बना दिया कि मैं लगभग आस्तिक बन गया। ऐसे व्यक्ति का कहा कैसे टालूं? इसीलिए....

शंकर गुहा नियोगी को एक झलक भर देखा था। शायद 1980 की शुरुआत में। तब मैं मशरुम की तरह पैदा हो गये किसी 'क्रांतिकारी गुट' का सदस्य था। नियोगी हमारे एक वजनदार नेता के साथ विचार विमर्श करने आये थे। हमने उनकी बातचीत नहीं सुनी। बहरहाल जब वे दोमंजिले से उतरकर सीढ़ी के पास खड़े नेता से बात कर रहे थे, तब ऊपर जाते हुए मैंने उन्हें देखा था। परिचय भी हुआ, लेकिन बातचीत खास कुछ नहीं हुई। वे हिंदी में बातें कर रहे थे। जाते वक्त कह गये, 'आप लोग उधर आइये, आप लोगों की मदद चाहिए'। नियोगी के जाने के बाद नेता ने अपने विचार विमर्श का 'विस्तार पूर्वक तात्विक विश्लेषण' से हमें समझा दिया कि नियोगी एक संशोधनवादी हैं। हम लोग तब 'सच्चा कम्युनिस्ट पार्टी' बनाने के नशे में मशगुल थे, जाहिर है कि उन्हें हमने भुला दिया। फिरभी दो बातें नजर में आयी थीं, जिन्हें आज भी भुला नहीं पाया हूं। एकदम आम आदमी जैसा एक व्यक्ति, जैसे मेरे घर के बगल में मशीन घर के मजदूरों में से कोई। चेहरे पर सबको अपना लेने वाली मुस्कान, मेहनकश लोगों में जो होती है। और उनकी आंखें जैसे अनंत आकाश में सपनों की उड़ान पर थीं।

बस, इतना ही। नियोगी को लेकर हमने फिर माथापच्ची नहीं की। नियोगी की गोली मारकर हत्या कर दिये जाने के बाद हमें झटका लगा। पत्र पत्रिकाओं में छपे आलेखों से उनके कामकाज के बारे में सतही तौर पर कुछ जानकारी मिली। इतना समझ में आ गया कि उनके विचार और कामकाज के तौर तरीके अलग तरह के हैं। उस दौर में जो लोग छत्तीसगढ़ जाते रहे हैं (जो लोग कनोड़िया के लिए मशहूर हो गये और बाद में उनमें से काफी लोग राज्य सरकार के मंत्री संतरी बन गये), ऐसे लोगों से बातचीत चल रही थी। उन्हें देखकर (सही वजह से) उनके साथ कहीं नियोगी को मिला नहीं पा रहा था। भीतर ही भीतर कुछ खटक रहा था। बाद में उनके बारे में, छत्तीसगढ़ मजदूर आंदोलन के बारे में थोड़ा बहुत जान सका, पढ़ लिया संघर्ष ओ निर्माण (अनुष्टुप प्रकाशन), इलिना सेन का लिखा इनसाइड छत्तीसगढ़ः ए पालिटिकल मेमोअर (पेंगुइन)। पुण्यव्रत जब उन दिनों की बातें किया करते थे, आंखों के सामने साकार हो जाते थे नियोगी और उनके छत्तीसगढ़ के मेहनतकश लोग। इसी तरह श्रमिक आंदोलन में नियोगी के परीक्षण निरीक्षण के बारे में एक धारणा बनी, उसे यथा संभव संक्षेप में यहां पेश करने की कोशिश कर रहा हूं।

शुरुआत में ही झटका। नियोगी ने मजदूरों को अपने के प्रति निष्ठावान होने के लिए कहा है। कहा है, कामचोरी नहीं चलेगी। ऐसा क्या सोचा भी जा सकता है कि एक ट्रेड यूनियन नेता मजदूरों को काम करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं! यह और साफ हुआ मशीनीकरण बनाम अर्ध मशीनीकरण संघर्ष से। प्रबंधन ने जब पूंजी निर्भर मशीनीकरण चालू करना चाहा, यूनियन ने अर्ध मशीनीकरण का जबावी विकल्प पेश कर दिया। फिर यहीं न रुककर तीन विख्यात अर्थशास्त्रियों से समीक्षा भी करा दी। समीक्षा रपट में देखा गया कि सेमी मशीनीकरण ज्यादा लाभजनक जो है, सो तो है ही, बल्कि साथ साथ यह श्रम निर्भर भी है। नतीजतन कड़वा निगलने की तरह सामयिक तौर पर होने के बावजूद प्रबंधन को सेमी मशीनीकरण मान लेना पड़ा। मजदूरों की छंटनी रोकी जा सकी। मूर्त परिस्थिति के मूर्त विश्लेषण के साथ श्रमिक आंदोलन में उनके प्रयोगों की ऐसी नजीर मेरी जानकारी में या अभिज्ञता में दूसरी नहीं है।

कैम्प इलाके में सिर्फ तीन पक्की इमारतें। टाइम आफिस, रेस्ट शेड और 'दारु भट्टी'। उस शराबखाने में मजदूरों की आवाजाही जारी रहती थी। पगार के दिन की बात तो अलग ही होती थीः नर्क गुलजार। हाड़ तोड़ मेहनत के बदले में जो मामूली सी मजदूरी मिलती थी, वह भी शराब भट्टी के चोर रास्ते से मालिक दलाल हड़प लेते थे। सीएमएसएस ने इसलिए शराबबंदी आंदोलन शुरु कर दिया। इस आंदोलन की अगुवाई महिलाएं कर रही थीं। पक्के नशेड़ी से रातोंरात दारु छुड़ाई नहीं जा सकती, इसलिए वे शराबखोरी की हद तय कर देते थे। नजर रखते थे कि कोई यह हद न तोड़ दें। हद तोड़ने पर आर्थिक जुर्माना। कोई कोई काबू से बाहर हुआ तो उसे सबके सामने शराबखोरी के पक्ष में भाषण देने को कहा जाता था। किसी किसी को यूनियन के कार्यकर्ताओं के साथ रहना पड़ता था। इस तरह शराब भट्टी की भीड़ छंटने लगी। आंदोलन इतना कामयाब रहा कि एक आदिवासी महिला सोनारी बाई का कहना है, 'पहले हम शराब पर सोलह आना खर्च करते थे, उस हिसाब से हम अब चार आना खर्च करते हैं। '(संघर्ष ओ निर्माण, पृ:204)

इन दोनों उदाहरणों के उल्लेख करने की एक ही वजह है- कोई ट्रेड यूनियन (जो आम तौर पर मजदूरों के वेतन, बोनस, ड्यूटी में फेरबदल, छंटनी, इत्यादि को लेकर माथापच्ची करती है) मजदूरों के मोहल्लों में घुस गयी- सिर्फ खदान के आठ घंटे के लिए नहीं, 24 घंटे के लिए। खोल दिये सत्रह विभाग। जिनमें से ज्यादातर का खदान के काम से कोई संबंध नहीं था। किंतु क्यों? इस सवाल के जबाव में ही नियोगी के परीक्षण निरीक्षण की प्रासंगिकता मिलेगी।

ऐसा बेनजीर ट्रेड यूनियन आंदोलन इस देश में अन्यत्र कहीं हुआ है या नहीं, मेरी जानकारी में नहीं है। इन सत्रह विभागों को संगठित करने के पीछे नियोगी की 'संघर्ष

और निर्माण' की अवधारणा थी-'संघर्ष के लिए निर्माण और निर्माण के लिए संघर्ष'। यह अवधारणा द्वांद्वात्मक पद्धति के प्रयोग का एक रचनात्मक नमूना है। किसी प्रतीत घटना (Phenomenon) को उसके समग्र जटिलता के साथ मिलाकर देखना, समग्रता में सबकुछ का सबकुछ के साथ क्रिया प्रतिक्रिया और इस सम्मिलित मिथष्क्रिया के मध्य घटना के अस्तित्व की अभिव्यक्ति।

आम तौर पर मार्क्सवादी पहले से इसका प्रयोग करते रहे हैं। लेनिन ने बहुत पहले दिखा दिया है कि श्रमिक वर्ग को समाज के सभी वर्गों के साथ अपने संबंध के बारे में फैसला करना होता है, दूसरे वर्गों के बीच आपसी संबंधों के बारे में भी विचार करना होता है। मालिक श्रमिक संबंध की अभिज्ञता से श्रमिक वर्ग सिर्फ ट्रेड यूनियन की चेतना पा सकती है, उसे इसके बाहर समाजतांत्रिक चेतना विकसित करनी होती है। यह काम 'पेशेवर क्रांतिकारियों' का है। नियोगी वैसे ही एक पेशेवर क्रांतिकारी थे इसलिए 'यही है समाजतांत्रिक चेतना' चीख कर इसका ऐलान करने के बजाय उन्होंने अपने कामकाज में समाजतांत्रिक चेतना के विकास के काम शुरु कर दिये थे।

कहने की जरुरत नहीं है कि जिन लोगों ने समाजतंत्र के विकास के काम में अपना मन प्राण न्योच्छावर कर दिये, उनमें से प्रत्येक ने इस तरह के कुछ न कुछ काम किये हैं। बोल्शेविक नेतृत्व में श्रमिक सोवियत, सैन्य सोवियत में लोकतंत्र का प्रसार लेनिन का इसी तरह का काम है। चीन में माओ त्से तुंग ने 1917-27 के दौरान मजदूरों किसानों के लिए नाइट स्कूल खोले थे, बाद में हुनान मुक्त विश्वविद्यालय। चीन के साम्राज्यवाद विरोधी संग्राम में डॉक्टरी मदद लेकर जब डॉ. नर्मान बेथून और द्वारका नाथ कोटनीस जैसे लोग पहुंच गये, तब उनकी मदद से शोषित जनता को स्वास्थ्य सचेतन करने के लिए नायाब स्वास्थ्य आंदोलन भी चलाया गया था। नियोगी उन्ही के रास्ते चल रहे थे। किन्तु उनकी अनन्यता, इस देश में इस तरह सोचना और कामकाज में उसका प्रयोग करना है। उनसे पहले या बाद में किसी और ने ऐसा किया है या नहीं, कम से कम मेरी जानकारी में नहीं है।

'विकल्प निर्माण' को बहुत सारे लोग सुधारवादी कहकर खारिज कर देना चाहते हैं। वे यह समझना नहीं चाहते कि सुधार दो तरह के होते हैं- पहला मौजूदा व्यवस्था बहाल करने के लिए, जो निश्चय ही संशोधनवाद है और दूसरा, ऐसा सुधार जो शोषित मनुष्यों के संग्राम को विकसित करने के लिए होता है, जो क्रांतिकारी सुधार है। विकल्प निर्माण से एक तरफ शोषित लोग अपने हक हकूक के बारे में सचेत हो जायेंगे, दूसरी तरफ शोषक वर्ग के खिलाफ संघर्ष ज्यादा तेज होगा। ऐसे छोटे छोटे निर्माण हो सकते हैं कि शोषक वर्ग के हमलों में तहस नहस हो जायें, किंतु शोषित वर्ग की विकसित चेतना को मिट्टी में मिलाना असंभव है।

आज के जमाने में शिक्षा आंदोलन, स्वास्थ्य आंदोलन ने मनुष्य के मुक्ति संग्राम

से जुड़कर व्यापक आकार ले लिया है। पाओलो फ्रेइरी, इवान इलीच की शिक्षा चिंता ने लातिन अमेरिका की शिक्षा व्यवस्था ही करीब करीब उलट पलट कर दी थी। नये उदारवाद के दमन उत्पीड़न से यह स्तिमित सी है, लेकिन खत्म नहीं हुई है। अल सल्वाडोर, बोलिविया, मेक्सिको में बड़े बड़े स्वास्थ्य आंदोलन हुए हैं। अब भी हो रहे हैं। अल सल्वाडोर की लड़ाई में नकदी के लिए अनेक डॉक्टरों ने अपने घर बार, गाड़ी, आसबाब सबकुछ बेच दिये।

पहले लोगों की धारणा यह थी कि एक बार राष्ट्र सत्ता पर कब्जा कर लिया जाये तो समाजतंत्र मुट्ठी में है। यह कितनी गलत धारणा है, इसका अनुभव हमें हो गया है। हालांकि मार्क्स ने इस बारे में अपनी साफ राय बहुत पहले दे दी थी। लेनिन ने अपने राष्ट्र और क्रांति ग्रंथ में मार्क्स, एंजेल्स को उद्धृत करके दिखाया है कि पूंजीवाद से कम्युनिज्म का रास्ता बिल्कुल सहज साध्य समतल नहीं होगा। मार्क्स ने कहा है कि नवजात राष्ट्रों के अपने जन्मदाग भी होते हैं। इसके अलावा जन मानस में पुराने समाज का अधिकार बोध (बुर्जुआ अधिकार, ध्यान धारणा, संस्कृति) रातोंरात खत्म नहीं हो सकती। इसलिए राष्ट्र की विलुप्ति निश्चित होने के बावजूद यह प्रक्रिया दीर्घस्थाई हो जाना तय है। यह प्रक्रिया किस रास्ते पर चलेगी, कितना वक्त लगेगा, इस बारे में पहले से कुछ कह पाना मुश्किल है, क्योंकि इस विषय पर कहने के लिए कोई उपादान उनके हाथों में नहीं था।

हमने सोवियत राष्ट्र में पूंजीवाद की वापसी देख ली है। कैसे ऐसा संभव हुआ, उसके बारे में यहां विस्तार से चर्चा गैरप्रासंगिक है। लेकिन द्वंद्वात्मक पद्धति छोड़कर खंडांशवादी (Reductionist) पद्धति अपनाने पर कैसे विकार पैदा होते हैं, उसका एक नमूना पेश कर रहे हैंः 1935 में पोलानी (Michael Polanyi) के साथ मास्को में बुखारिन की मुलाकात हुई थी। हालांकि तीन साल बाद ही उनकी हत्या हो गयी थी, फिर भी उस दौर में बुखारिन कम्युनिस्ट पार्टी के अग्रणी तात्विक नेता थे। पोलानी ने जानना चाहा था, विशुद्ध विज्ञान (pure science) की चर्चा कैसे चल रही है। बुखारिन ने जबाव दियाः विशुद्ध विज्ञान वर्गीय समाज का एक विकारग्रस्त रोग का लक्षण है, समाजतंत्र में 'विज्ञान विज्ञान के लिए' यह धारणा ही खत्म हो जायेगी क्योंकि वैज्ञानिकों की दिलचस्पी इसमें है कि स्वतःस्फूर्त तरीके से पंचवर्षीय परिकल्पना की समस्याएं सुलझ जायेंगी। इस पर मंतव्य की जरुरत नहीं है।

चीन में माओ ने सांस्कृतिक क्रांति की शुरुआत की थी। कहा था कि न जाने ऐसी और कितनी क्रांतियां होंगी। नहीं हुईं, नतीजतन चीन भी पूंजीवाद के रास्ते पर है। इसलिए राष्ट्र विप्लव पहले हो या बाद में, हर वक्त द्वांद्विक पद्धति का प्रयोग करके मूर्त परिस्थिति का मूर्त विश्लेषण करके ही आगे बढ़ना जरुरी है। इस देश में दल्ली राजहरा की प्रयोगशाला में नियोगी ने वे परीक्षण निरीक्षण ही किये हैं। जो आज

ज्यादा से ज्यादा प्रासंगिक होते जा रहे हैं।

प्रासंगिक होते जा रहे हैं, यह नियोगी को लेकर नये सिरे से संवाद चर्चा, लिखने और वृत्तचित्र बनाने जैसी गतिविधियों से साफ है। अनेक लोग जैसे उनकी धारणा, विचारधारा की पड़ताल कर रहे हैं, तो कुछ लोग उनका चरित्र हनन की भी कोशिशें कर रहे हैं। वर्गों में बंटे समाज में यह स्वाभाविक है। पुण्यव्रत ने यह मामला उठाया नहीं है। किंतु इस प्रसंग में एक दो बातें कहनी ही होगी। जिस वर्ग ने नियोगी की हत्या कर दी, वह नियोगी की कुत्सा करे, तो इसमें अचरज की बात नहीं है। किंतु जो लोग नियोगी के कामकाज में लंबे समय तक उनके सहयोगी रहे हैं, वे लोग जब अतीत के तथ्यपरक ब्यौरे के बीच नियोगी के खिलाफ कुछ निराधार आरोप लगाते हैं, दो चार बेतरतीब मंतव्य खोंस देते हैं, तो यह अत्यंत वेदनादायक है। मैं इलिना सेन के लिखे Inside Chhattishgargh:A Political memoir की बात कर रहा हूं। उन्होंने एक जगह लिखा हैः Although he could be authoritarian at times, he recognized the strong urge of the women for their place in the sun...(p-63). फिर थोड़े बाद लिखा हैः ingeneral, Niyogi distrusted educated and independent women,...(p-122). यह परस्पर विरोधी मंतव्य हुआ कि नहीं! नियोगी के सीएमएसएस के संचालन की पद्धति को उन्होंने 'Political culture of power and authoritarianism' (p-123) करार दिया। इन सबका जवाब देना निरर्थक है। ऐसा करने पर ऐसे प्रसंग महत्वपूर्ण बन जाते हैं। इसलिए नहीं दे रहा हूं।

इतिहास के प्रेक्षापट पर व्यक्ति की भूमिका हम किस नजरिये से देखेंगे, उसे लेकर एक दो बातें कहकर इस प्रसंग की इति कर रहा हूं। हमें व्यक्ति के कर्म जीवन पर नजर रखनी होगी, उसके निजी जीवन, उनकी 'सीमा और स्वविरोध' इसमें बड़ा बनना नहीं चाहिए। रने देकार्त भौतिकी विद्या में अद्वैत वस्तुवादी हैं और अधिविद्या में विशुद्ध भाववादी। इन दोनों मामलों को अलग अलग देखते थे मार्क्स। अधिविद्या के लिए देकार्त के वैज्ञानिक वस्तुवाद में कोई खामी आ गयी है, ऐसा मार्क्स ने नही कहा है। किसी भी प्रतिभाशाली व्यक्ति में स्वविरोध हो सकता है, होता भी है। कोई कितना ही क्षमता का अधिकारी हो, देश- काल- पात्र- परिस्थिति का दबाव पूरी तरह टालना उसके लिए भी संभव नहीं होता। नये युग के नायक अपनी चिंता चेतना में पुराने युग के कुछ अवशेष भी ढोते रहने को मजबूर होते हैं। यह सहज सत्य है। इसे लेकर उल्लास या असहजता का कोई कारण नहीं है।

स्विस अर्थशास्त्री इतिहासकार ज्यां सिसमंदि (अंग्रेजी उच्चारण सिसमंडि, 1773-1842) के बारे में चर्चा करते हुए लेनिन ने कहा थाः आधुनिक प्रयोजन के हिसाब से ऐतिहासिक व्यक्तित्वों ने कोई अवदान नहीं किया है, इस कसौटी पर ऐतिहासिक सेवा का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता, अपने पूर्ववर्तियों के मुकाबले

उन्होंने जो नये नये अवदान रखें, विचार उसी पर होना चाहिए। इसी दृष्टिकोण से हम नियोगी के इतिहास निष्ठ अवदान को याद करेंगे।

अंत में-जो नई पीढ़ी आज भी शोषणमुक्त समाज का सपना देखती है, वे पुण्यव्रत के इस संस्मरण को अन्यतम पाथेय बनाकर इस सपने को पूरा करने के लिए छोटे छोटे लेकिन प्रत्ययी कदम उठाते हुए आगे बढ़े, जीवन के आखिरी चरण में मेरी यही एकमात्र आकांक्षा है।

प्रवीर गंगोपाध्याय

साभार :

1. वीआई लेनिन, कि करिते होइबे?, मनीषा, कोलकाताः1972
2. V.I Lenin, Collected works, Vol.25, Progress Publishers, Moscow 1964.
3. Ilina Sen,Inside Chhattishgargh: A Political Memoir,Penguin Books India,Gurgaon:2014
4. आहेड इनिशिएटिव्स, महान चिंताविददेर भावनाय शिक्षा, कोलकाताः2015
5. रेबेका जैसो- अगुईलर और हावर्ड ओवेइजकिन, (अनुवादःगायत्री राय), 'साम्राज्यवादी शासनेर विरुद्धे प्रतिरोधेर लड़ाई, चिकित्सा ओ जन स्वास्थ्य विषये एक विकल्प भविष्यत् निर्माण', बांग्ला मंथली रिव्यू, दिसंबर, 2015
6. रामकृष्ण भट्टाचार्य, मननेर मूर्ति, कोरक, कोलकाता, 2010
7. Michael Polanyi,The Tacit Dimension, Penguine Books, 2009